मंगलाचरण

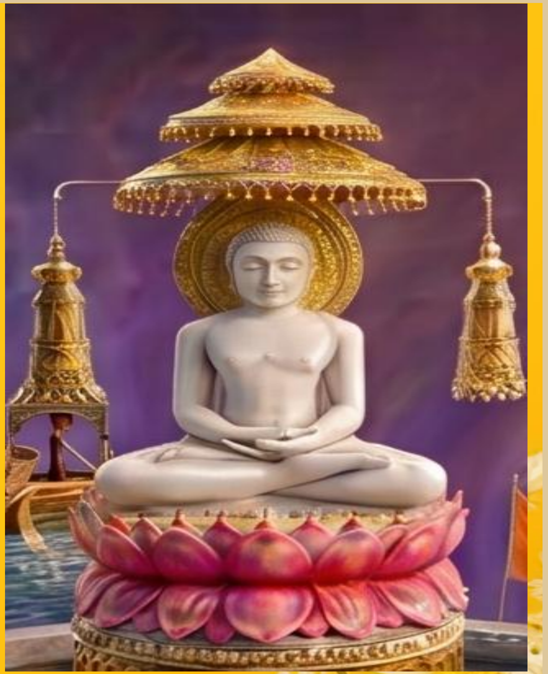

सिद्धे जिणिंदचंदे, आयरिय-उवज्झाय-साहुगणे ।
वंदिय सम्मद्दंसण-चरित्तलद्धिं परूवेमो ॥1॥

संक्रमण आदि कृष्टि का सार

- संक्रमण और आय-व्यय व्यवस्था: कृष्टि वेदन के प्रत्येक समय में कृष्टियों का संक्रमण (बदलाव) होता है। एक कृष्टि का द्रव्य अपनी ही कषाय की नीचे वाली संग्रह कृष्टियों में जाता है (स्वस्थान संक्रमण) या आगे वाली कषाय की प्रथम संग्रह कृष्टि में जाता है (परस्थान संक्रमण)। इस प्रक्रिया में 12 संग्रह कृष्टियों के बीच द्रव्य के 'आय' (आने वाला द्रव्य) और 'व्यय' (जाने वाला द्रव्य) का सटीक गणितीय विभाजन किया जाता है।
- घात कृष्टि और गोपुच्छ रचना: क्षपक जीव (ध्यानस्थ मुनि) प्रतिसमय कृष्टियों के अग्रभाग (ऊपरी हिस्से) का नाश (घात) करता है, जिसे 'घात कृष्टि' कहते हैं। इस घात द्रव्य को नीचे की कृष्टियों में इस विशेष गणितीय प्रकार से बांटा जाता है कि कृष्टियों की 'गोपुच्छ' (गाय की पूंछ के समान नीचे से ऊपर घटता हुआ क्रम) रचना सुरक्षित रहे और उसका अभाव न हो।

संक्रमण आदि कृष्टि का सार

- <u>अपूर्व कृष्टियों का निर्माण:</u> संक्रमण द्रव्य और बंध द्रव्य के माध्यम से नई कृष्टियां बनाई जाती हैं जिन्हें 'अपूर्व कृष्टि' कहते हैं। ये कृष्टियां पुरानी कृष्टियों के नीचे (अधस्तन कृष्टि) या उनके बीच-बीच में (अंतर कृष्टि) रची जाती हैं।
- <u>बंध द्रव्य की भूमिका:</u> मोह के बंध द्रव्य से चारों कषायों (क्रोध, मान, माया, लोभ) की केवल 'प्रथम संग्रह कृष्टि' में ही नई अपूर्व कृष्टियां बनाता है, क्योंकि अन्य संग्रह कृष्टियों का बंध नहीं होता है।
- <u>कर्मों की स्थिति में भारी कमी:</u> क्रोध कषाय की प्रथम संग्रह कृष्टि के वेदन के अंतिम समय में जीव के कर्मों की स्थिति में भारी कमी आती है। संज्वलन कषायों का नया स्थिति-बंध घटकर '100 दिन - अंतर्मुहूर्त' रह जाता है और उनका स्थिति-सत्त्व (सत्ता) मात्र 6 वर्ष 8 मास रह जाता है। तीन घातिया कर्मों का स्थिति-बंध घटकर '10 वर्ष - अंतर्मुहूर्त' रह जाता है

संकमदि संगहाणं, दव्वं सगहेट्ठिमस्स पढमोत्ति ।
तदणुदये संखगुणं, इदरेसु हवे जहाजोग्गं ॥523॥

- अन्वयार्थ: (संगहाणं दव्वं) संग्रह-कृष्टियों का द्रव्य (सगहेट्ठिमस्स) विवक्षित अपनी कषाय के नीचे की कषाय की (पढमोत्ति) प्रथम संग्रह-कृष्टि तक (संकमदि) संक्रमण करता है।
- (तदणुदये) विवक्षित उदयरूप संग्रह-कृष्टि के अनन्तर उदय आने योग्य कृष्टि में (संखगुणं) संख्यातगुणा संक्रमित होता है।
- (इदरेसु) इतर कृष्टियों में (जहाजोग्गं) यथायोग्य (हवे) संक्रमित होता है ॥523॥

संक्रमण द्रव्य का विभाग

कृष्टि वेदक के प्रत्येक समय में कृष्टियों का संक्रमण भी होता है ।

विवक्षित कृष्टि का संक्रमण अपनी स्वयं की नीचे की शेष संग्रह कृष्टियों में होता है । इसे स्वस्थान संक्रमण कहते हैं ।

- जैसे क्रोध की प्रथम संग्रह का क्रोध की दूसरी, तीसरी संग्रह में संक्रमण होता है । क्रोध की द्वितीय का क्रोध की तीसरी संग्रह में संक्रमण होता है ।

विवक्षित कृष्टि का संक्रमण अपने से नीचे (आगे) की कषाय की प्रथम संग्रह कृष्टि मात्र में होता है । इसे परस्थान संक्रमण कहते हैं ।

- जैसे क्रोध की प्रथम या द्वितीय या तृतीय संग्रह कृष्टि का द्रव्य मान की प्रथम संग्रह कृष्टि में संक्रमित होता है ।

जिस संग्रह कृष्टि का उदय चल रहा है, उसमें से अपकृष्ट द्रव्य से संख्यात गुणा द्रव्य अनंतर उदय में आने वाली संग्रह कृष्टि में संक्रमित करता है । शेष कृष्टियों में यथायोग्य द्रव्य संक्रमित होता है ।

आय-व्यय द्रव्य

आय द्रव्य

अन्य संग्रह कृष्टियों से संक्रमण होकर विवक्षित संग्रह कृष्टि में आया हुआ द्रव्य आय द्रव्य कहलाता है ।

व्यय द्रव्य

विवक्षित संग्रह कृष्टि से अन्य अधस्तन कृष्टियों में संक्रमित द्रव्य व्यय द्रव्य कहलाता है ।

एकद्रव्य

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि के बिना शेष 11 संग्रह कृष्टि के संक्रमण द्रव्य को 'एकद्रव्य' कहते हैं ।

तेरह द्रव्य

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का संक्रमण द्रव्य 'तेरह द्रव्य' कहलाता है । क्योंकि अन्य संग्रह कृष्टियों के द्रव्य से प्रथम संग्रह कृष्टि का द्रव्य तेरह गुणा है ।

यह संक्रमण द्रव्य अपनी-अपनी संग्रह कृष्टि में अपकर्षण भागहार का भाग देकर प्राप्त एकभाग प्रमाण है ।

आय-द्रव्य

लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि में लोभ की प्रथम एवं द्वितीय संग्रह कृष्टि से एक-एक द्रव्य प्राप्त होने से इसका आय द्रव्य दो है ।

लोभ की दूसरी संग्रह कृष्टि में मात्र लोभ की प्रथम संग्रह कृष्टि से एक द्रव्य प्राप्त होने से इसका आय द्रव्य एक है ।

लोभ की प्रथम संग्रह कृष्टि में माया की पहली, दूसरी, तीसरी संग्रह कृष्टि का द्रव्य प्राप्त होने से इसका आय द्रव्य तीन है ।

इसी प्रकार माया की प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय संग्रह कृष्टि का आय द्रव्य क्रमशः तीन, एक और दो है ।

इसी प्रकार मान की द्वितीय एवं तृतीय संग्रह कृष्टि का आय द्रव्य क्रमशः एक और दो है ।

आय द्रव्य

- मान की प्रथम संग्रह कृष्टि में क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का तेरह द्रव्य, क्रोध की द्वितीय एवं तृतीय संग्रह कृष्टि का एक-एक द्रव्य प्राप्त होने से आय द्रव्य पंद्रह है ।
- क्रोध की तृतीय संग्रह कृष्टि में प्रथम संग्रह कृष्टि का तेरह द्रव्य एवं द्वितीय संग्रह कृष्टि का एक द्रव्य प्राप्त होने से आय द्रव्य चौदह है ।
- क्रोध की द्वितीय संग्रह कृष्टि में प्रथम संग्रह कृष्टि से अपकर्षित द्रव्य तेरह होना चाहिए । उससे चौदह गुणा संक्रमण होता है । इसलिए आय द्रव्य $13 \times 14 = 182$ होता है ।
- अनंतर भोगने योग्य कृष्टि में संख्यात गुणा द्रव्य का संक्रमण होता है । यहाँ संख्यात का प्रमाण (अपना गुणकार + 1) है । अत: $(13 + 1) = 14$ गुणकार का प्रमाण है ।
- क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में आय द्रव्य नहीं है । क्योंकि अनुभाग का यहाँ उत्कर्षण नहीं होता ।
- यहाँ अनुभाग हीन होने की अपेक्षा अपकर्षण करने को संक्रमण कहा है । अन्य प्रकृति में जाने पर अपकर्षण, संक्रमण दोनों को संक्रमण कहा है ।

व्यय द्रव्य

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 182 + 13 + 13 = 208 है ।

क्रोध की द्वितीय संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 1 + 1 = 2 है ।

क्रोध की तृतीय संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 1 है ।

मान की प्रथम संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 3 है ।

मान की द्वितीय संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 2 है ।

मान की तृतीय संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य 1 है ।

इसी प्रकार माया की तीन संग्रहकृष्टियों का व्यय द्रव्य 3, 2, 1 है ।

लोभ की प्रथम, द्वितीय संग्रह कृष्टियों का व्यय द्रव्य 3, 2 है ।

लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य नहीं है क्योंकि अनानुपूर्वी संक्रमण का अभाव है ।

आय-व्यय द्रव्य

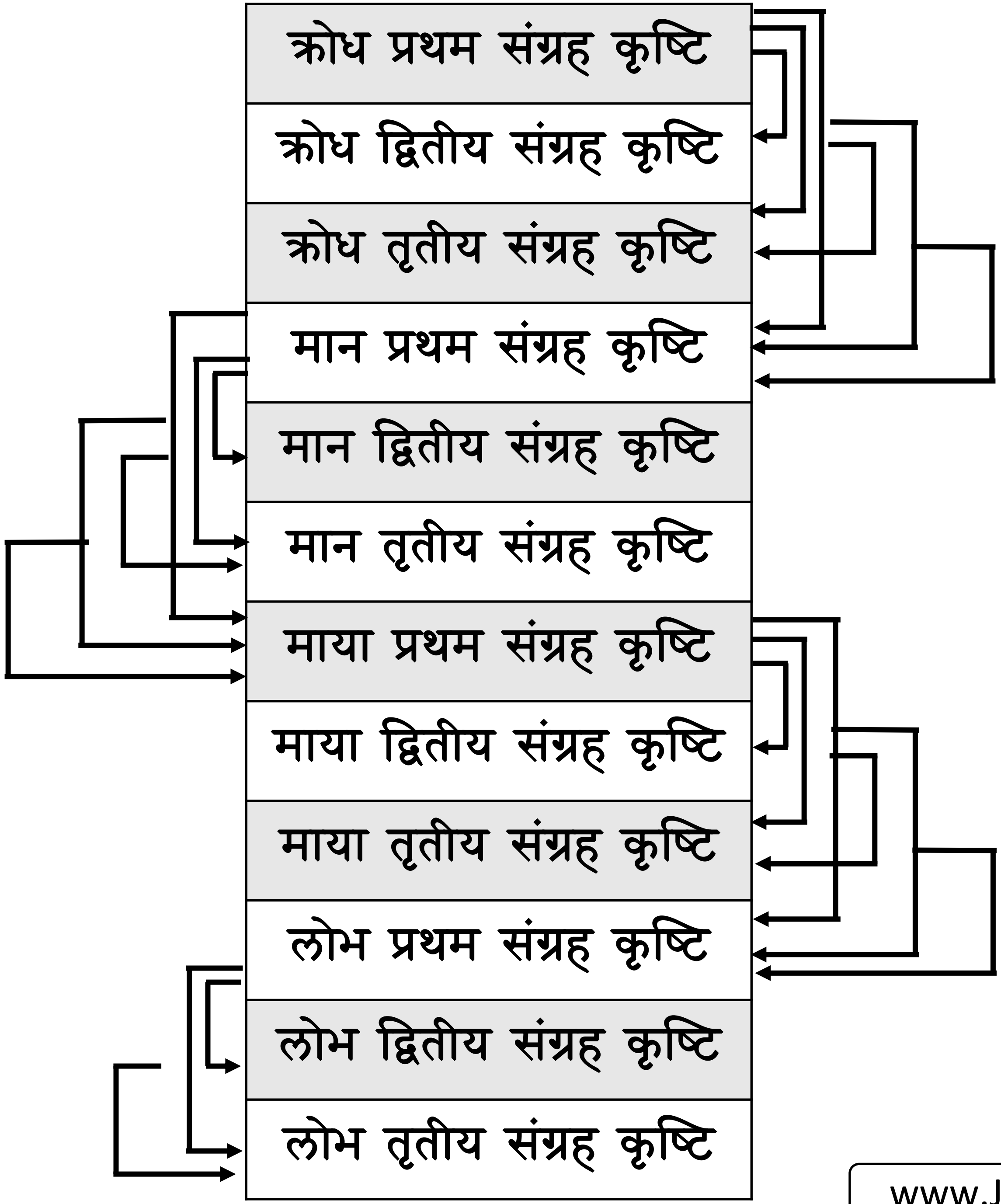

कृष्टि	आय द्रव्य	व्यय-द्रव्य
क्रोध 1	0	208
क्रोध 2	182	2
क्रोध 3	14	1
मान 1	15	3
मान 2	1	2
मान 3	2	1
माया 1	3	3
माया 2	1	2
माया 3	2	1
लोभ 1	3	2
लोभ 2	1	1
लोभ 3	2	0
कुल	226	226

www.JainKosh.org

पडिसमयमसंखेज्जदिभागं णासेदि कंडयेण विणा।
बारससंगहकिट्टीणग्गादो किट्टिवेदगो णियमा ॥524॥

- अन्वयार्थ: (किट्टिवेदगो) कृष्टिवेदक जीव (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (कंडयेण विणा) कांडक बिना (बारससंगह-किट्टीणग्गादो) बारह संग्रह-कृष्टियों के अग्रभाग से (असंखेज्जदिभागं) सर्वकृष्टियों के असंख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियों को (णियमा) नियम से (णासेदि) नष्ट करता है ॥524॥

घात कृष्टि

कृष्टिवेदक जीव प्रथम समय से समस्त 12 कृष्टियों के अग्रभाग से कुल कृष्टियों के असंख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियों का घात करता है । अर्थात् अधिक अनुभाग युक्त ऊपर की कृष्टियों का द्रव्य नीचे की हीन अनुभाग वाली कृष्टियों में संक्रमित करता है ।

इन घाती जाने वाली अग्र-कृष्टियों को घात कृष्टि कहते हैं ।

$$\text{घात कृष्टियों की संख्या} = \frac{\dfrac{\text{अपनी–अपनी संग्रहकृष्टि}}{\text{ओ}}}{\text{असंख्यात}}$$

घात कृष्टि द्रव्य = अपनी-अपनी अंतिम कृष्टि का द्रव्य × घात कृष्टि

इसमें चय द्रव्य मिलाने हेतु घात कृष्टि द्रव्य को कुछ अधिक करना ।

घात कृष्टि

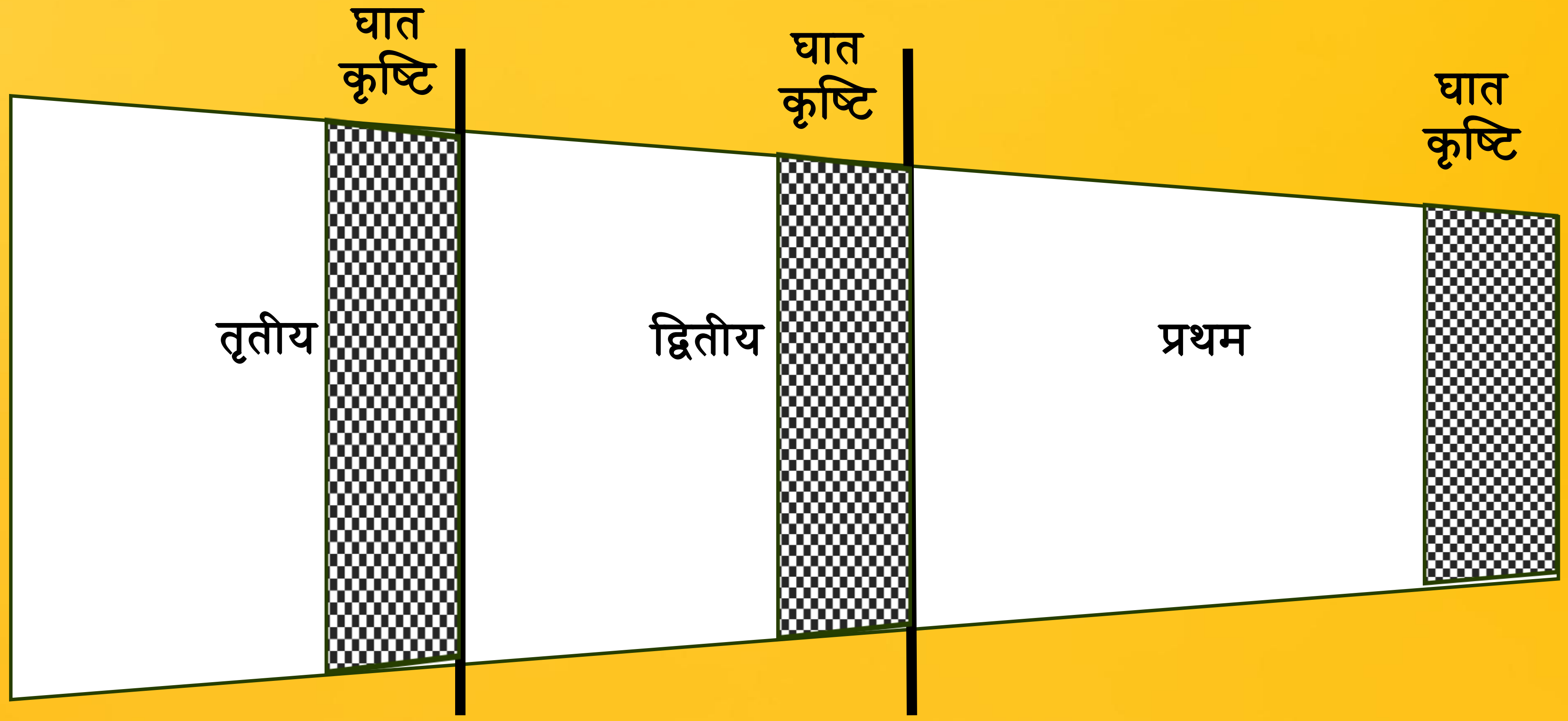

णासेदि परट्ठाणिय, गोउच्छं अग्गकिट्टिघादादो ।
सट्ठाणियगोउच्छं, संकमदव्वादु घादेदि ॥525॥

- अन्वयार्थः (अग्गकिट्टिघादादो) अग्रकृष्टिघात से (परट्ठाणिय गोउच्छं) परस्थानिक गोपुच्छ का (णासेदि) नाश करता है।
- (संकमदव्वादु) संक्रमण द्रव्य से अर्थात् पूर्वोक्त व्यय-द्रव्य से (सट्ठाणियगोउच्छं) स्वस्थानीय गोपुच्छ का (घादेदि) नाश करता है ॥525॥

गोपुच्छ का नाश

स्वस्थान गोपुच्छ

- विवक्षित एक संग्रहकृष्टि में अंतरकृष्टियों का जो विशेषहीन क्रम है उसे स्वस्थान गोपुच्छ कहते हैं ।

परस्थान गोपुच्छ

- नीचे की विवक्षित संग्रह कृष्टि की चरम कृष्टि से ऊपर की अन्य संग्रहकृष्टि की प्रथम संग्रहकृष्टि में जो विशेषहीन क्रम है, उसे परस्थान गोपुच्छ कहते हैं ।

इस प्रकार घात कृष्टियों के द्वारा परस्थान गोपुच्छ का नाश होता है क्योंकि घात कृष्टि से अनंतर कृष्टि में चयहीन क्रम था, वह क्रम कृष्टियों के नष्ट हो जाने से नष्ट हो गया एवं

संक्रमण द्रव्य द्वारा स्वस्थान गोपुच्छ का नाश होता है क्योंकि एक-एक कृष्टि में से हीनाधिक द्रव्य का संक्रमण हुआ है ।

www.JainKosh.org

आयादो वयमहियं, हीणं सरिसं कहिंपि अण्णं च ।
तम्हा आयदृव्वा, ण होदि सट्ठाणगोउच्छं ॥526॥

- अन्वयार्थः (कहिंपि) कुछ संग्रह-कृष्टियों में (आयादो वयमहियं) आयद्रव्य से व्ययद्रव्य अधिक है।
  - कुछ स्थान पर (हीणं) हीन है।
  - कुछ स्थान पर (सरिसं) समान है।
  - कुछ स्थान पर (अण्णं च) अन्य प्रकार से है अर्थात्
    - कुछ स्थान पर आयद्रव्य है किन्तु व्ययद्रव्य नहीं है;
    - कुछ स्थान पर व्ययद्रव्य है किन्तु आयद्रव्य नहीं है।
- (तम्हा) इसलिए (आयदृव्वा) आयद्रव्य से (सट्ठाणगोउच्छं) स्वस्थान गोपुच्छ (ण होदि) नहीं होता है ॥526॥

प्रश्न- क्या आय द्रव्य से स्वस्थान गोपुच्छ नहीं बन सकता है ?

उत्तर

कहीं पर आय द्रव्य से व्यय द्रव्य अधिक है, सदृश है, कम है,

कहीं पर आय द्रव्य नहीं है,

कहीं पर व्यय द्रव्य नहीं है,

इसलिए आय द्रव्य से स्वस्थान गोपुच्छ का समायोजन नहीं हो पाता ।

घादयदव्वादो पुण, वय आयदखेत्तदव्वगं देदि ।
सेसासंखाभागे, अणंतभागूणयं देदि ॥527॥

- अन्वयार्थ: (घादयदव्वादो पुण) घात द्रव्य से (वय आयदखेत्तदव्वगं) व्ययद्रव्य और आयतक्षेत्रद्रव्य (देदि) देता है।
- (सेसासंखाभागे) शेष रहा असंख्यात बहुभाग द्रव्य (अणंतभागूणयं) अनन्तवें भाग हीनक्रम से (देदि) देता है ॥527॥

www.JainKosh.org

स्वस्थान गोपुच्छ का सद्भाव

घात कृष्टि द्रव्य के द्वारा स्वस्थान और परस्थान गोपुच्छ का सद्भाव पुनः होता है। उसे बताते हैं ।

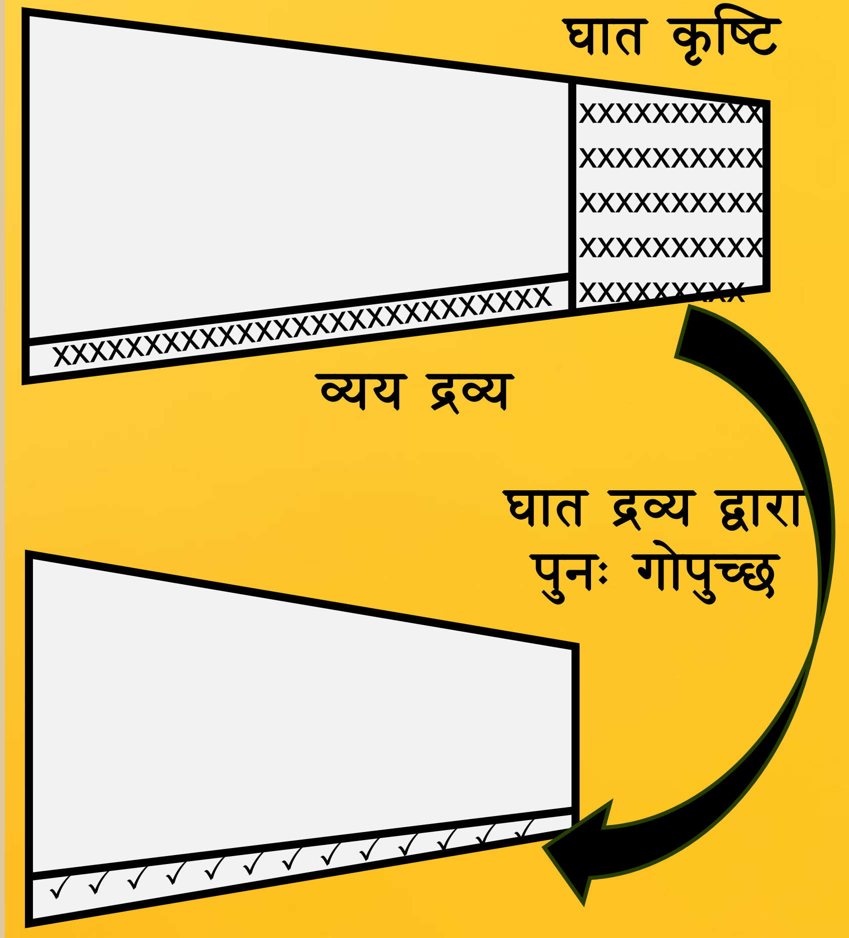

जो घात कृष्टि संबंधी व्यय द्रव्य है, उसे विवक्षित संग्रह कृष्टि के व्यय द्रव्य में से कम करें । क्योंकि जिन घात कृष्टियों का नाश हुआ है, वहाँ व्यय द्रव्य का समायोजन करना ही नहीं है । इसलिये घात कृष्टि संबंधी व्यय द्रव्य को कम किया ।

शेष रहा जो व्यय द्रव्य है, उसे घात कृष्टि द्रव्य में से ग्रहण करके जिस-जिस अवयव कृष्टि का जितना-जितना व्यय द्रव्य हुआ है, उतना-उतना द्रव्य देने पर उन कृष्टियों के स्वस्थान गोपुच्छ का सद्भाव होता है ।

www.JainKosh.org

व्यय द्रव्य का प्रमाण

अंतिम अवयव कृष्टि का व्यय द्रव्य

$$= \frac{\text{विवक्षित संग्रह की अंतिम अवयव कृष्टि}}{\text{अपकर्षण भागहार}}$$

घात कृष्टि संबंधी व्यय द्रव्य

= (अंतिम अवयव कृष्टि का व्यय द्रव्य × घात कृष्टि)

देने योग्य व्यय द्रव्य

=विवक्षित संग्रह कृष्टि का व्यय द्रव्य – घात कृष्टि संबंधी व्यय द्रव्य

इतना द्रव्य; घात कृष्टि द्रव्य में से लेकर यथायोग्य देने पर स्वस्थान गोपुच्छ का सद्भाव होता है ।

www.JainKosh.org

परस्थान गोपुच्छ का सद्भाव

- माना कि घात कृष्टियाँ = 3; चय = 4
- प्रत्येक संग्रह में कृष्टियाँ = 8

लोभ 3rd	लोभ 2nd	लोभ 1st
356	324	292
360	328	296
364	332	300
368	336	304
372	340	308
376	344	312
380	348	316
384	352	320

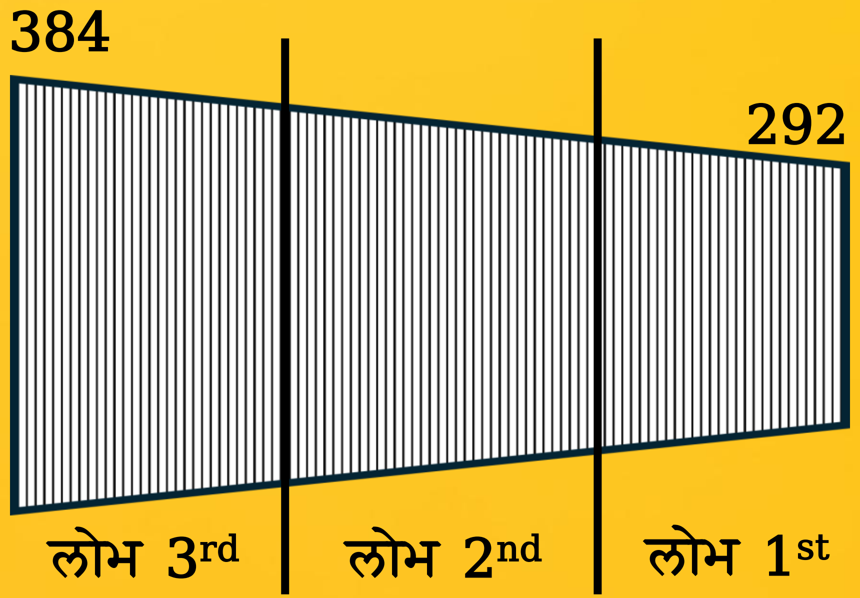

लोभ 3rd	लोभ 2nd	लोभ 1st
368	336	304
372	340	308
376	344	312
380	348	316
384	352	320

घात के पश्चात्

www.JainKosh.org

- यहाँ लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि की अंतिम कृष्टि से लोभ की दूसरी संग्रह कृष्टि की प्रथम कृष्टि में (घात कृष्टि + 1) प्रमाण चय कम हैं। यथा 368 से 352 द्रव्य (3+1) × 4 = 4 × 4 = 16 प्रमाणहीन है।
- यदि लोभ की दूसरी संग्रह कृष्टि की आदि कृष्टि में घात कृष्टि प्रमाण चय दे दिये जायें, तो इन दोनों कृष्टियों में चयहीन क्रम हो जाएगा।
- यथा 352 में (3×4) = 12 द्रव्य देने पर 352 + 12 = 364 द्रव्य होगा। यह 368 से एक चय हीन है।
- यह घात कृष्टि प्रमाण चय द्रव्य; लोभ की दूसरी संग्रह कृष्टि की शेष कृष्टियों में भी देना होगा जिससे पूरी दूसरी संग्रह कृष्टि में चयहीन क्रम बना रहे। यह जो समान द्रव्य प्रथम कृष्टि से अंतिम कृष्टि तक दिया जाता है, इसे आयत द्रव्य कहते हैं।
- इस आयत क्षेत्र की चौड़ाई (लोभ की तृतीय संग्रह की घातकृष्टि × चय) है। तथा लम्बाई = लोभ की द्वितीय संग्रह की शेष रही कृष्टि प्रमाण है।
- ध्यान रहे यह आयत द्रव्य लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि में घात कृष्टियों के आयाम को छोड़कर दिया जाता है। सर्वत्र ही घात कृष्टियों में द्रव्य नहीं देना है।

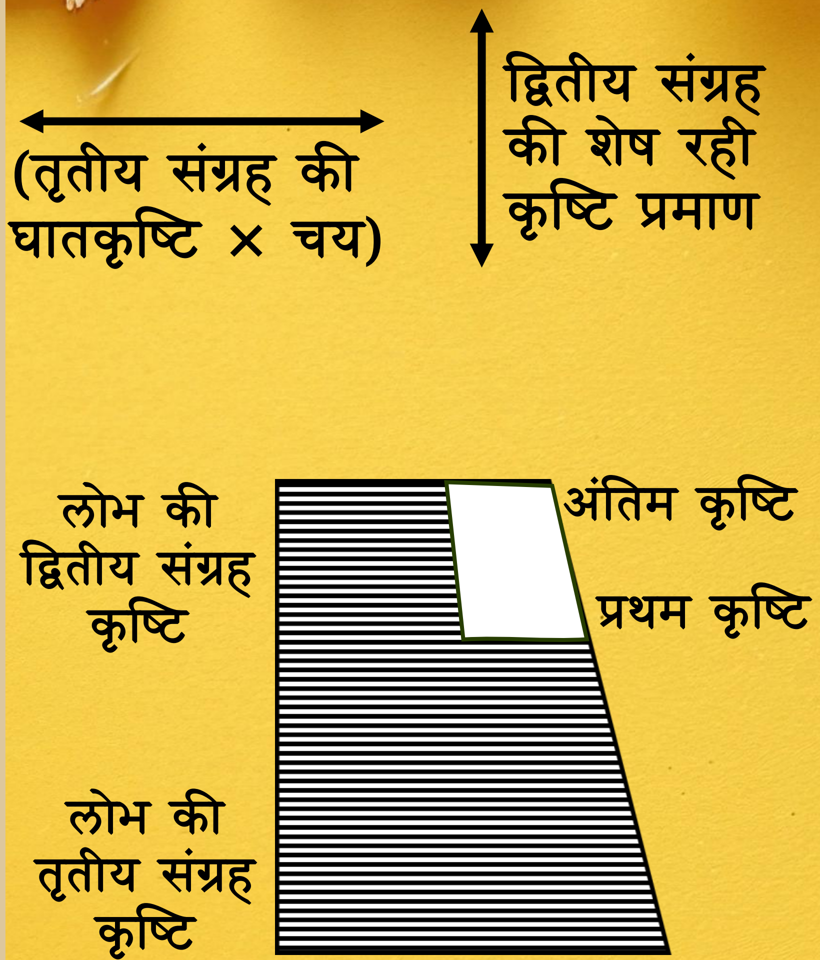

आयत क्षेत्र

- इस प्रकार लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि की अंतिम कृष्टि में द्रव्य 336 + 12 = 348 हुआ। इसके ऊपर की कृष्टियाँ घात कृष्टि हैं। उसके ऊपर प्रथम संग्रह की प्रथम कृष्टि का द्रव्य 320 है।
- यह पूर्व में दिये 1 आयत क्षेत्र + {(लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि की घात कृष्टि + 1) × चय} प्रमाण द्रव्य से हीन है। यथा 12 + {(3+1) × 4} = 12 + 16 = 28
- याने 348 – 28 = 320 द्रव्य
- इसमें एक आयत क्षेत्र पूर्ववत् तथा (लोभ की द्वितीय संग्रहकृष्टि की घात कृष्टि × चय) प्रमाण द्रव्य देने से परस्थान गोपुच्छ का सद्भाव हो जाएगा।

आयत क्षेत्र

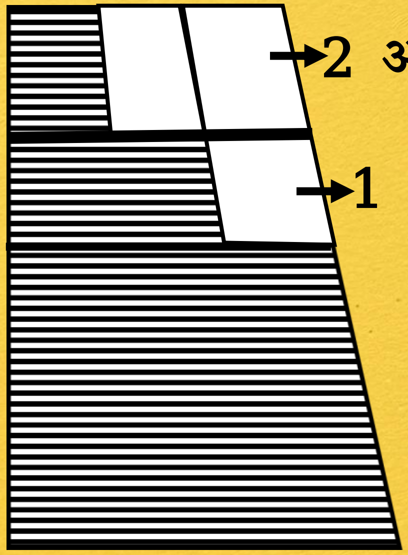

- यथा 12 + 3 × 4 = 12 + 12 = 24
- यह 320 में देने पर 320 + 24 = 344 । यह 348 से एक चयहीन द्रव्य है ।
- इतना द्रव्य लोभ की प्रथम संग्रह की शेष रही सर्व कृष्टियों में देने पर पूरी प्रथम कृष्टि में गोपुच्छ का सद्भाव बना रहता है ।
- इस प्रकार पहले का एक आयत क्षेत्र एवं लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि की घात कृष्टियों के कारण यह दूसरा आयत क्षेत्र हुआ ।
- इस द्वितीय आयत क्षेत्र की चौड़ाई = लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि की घात कृष्टि × चय है । इसकी लंबाई = लोभ की शेष रही प्रथम संग्रह कृष्टि प्रमाण है ।

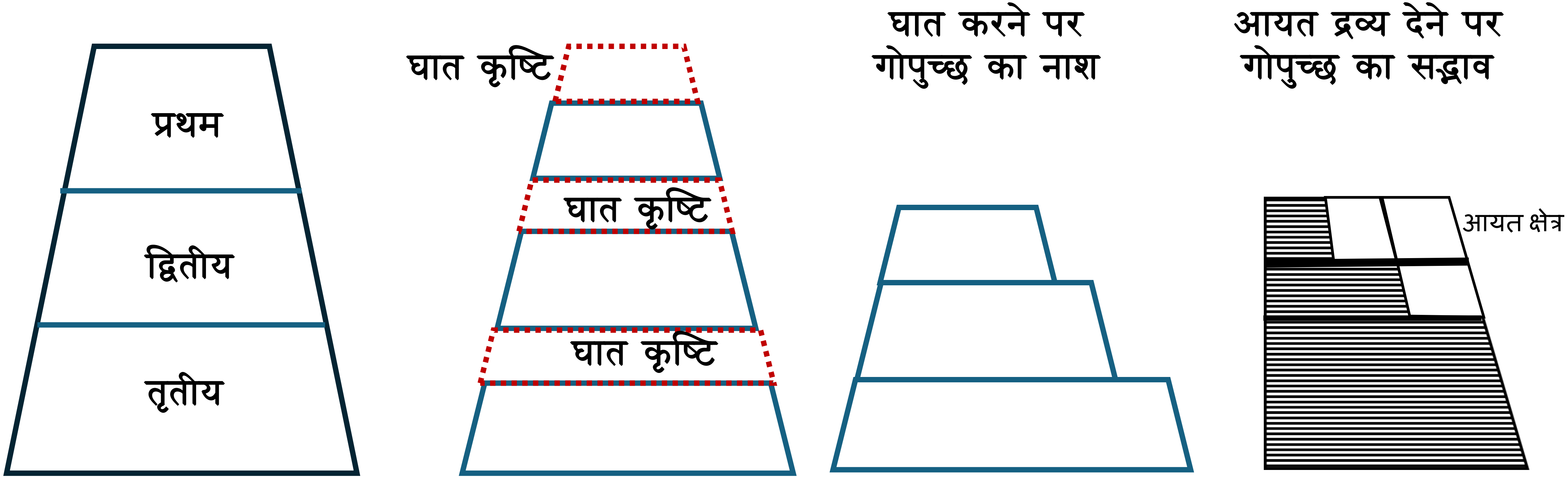
प्रथम
द्वितीय
तृतीय
घात कृष्टि
घात कृष्टि
घात कृष्टि
घात करने पर
गोपुच्छ का नाश
आयत द्रव्य देने पर
गोपुच्छ का सद्भाव
आयत क्षेत्र

11 संग्रह कृष्टियों में आयत क्षेत्रों की रचना

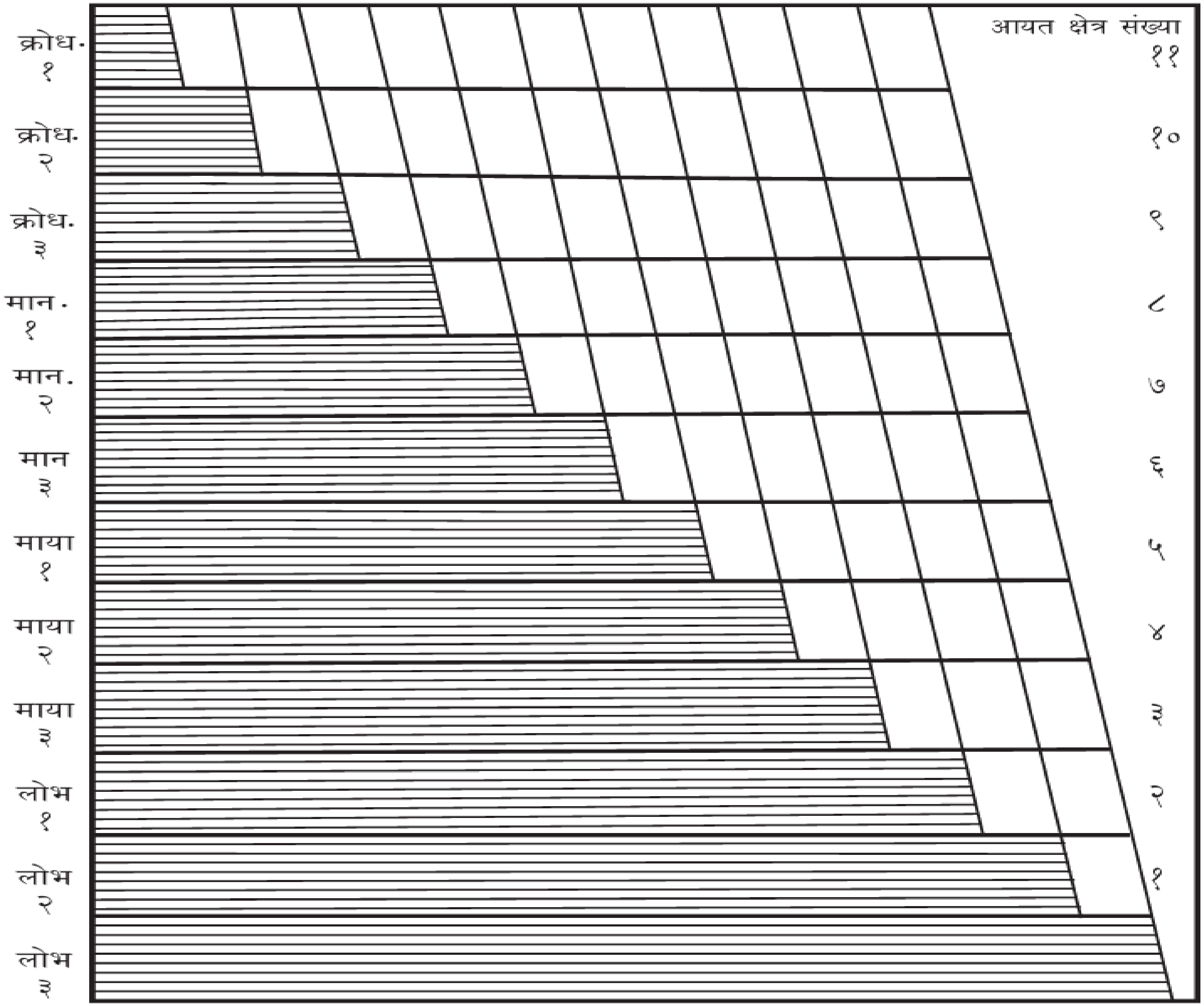

- इस प्रकार ऊपर प्रत्येक संग्रह कृष्टि में आयत क्षेत्र दिया जाता है । इतनी विशेषता है कि एक-एक आयत क्षेत्र बढ़ता जाता है । यथा माया की तृतीय आदि संग्रह कृष्टियों में क्रमश: 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11 आयत क्षेत्र प्राप्त होते हैं ।
- प्रत्येक आयत क्षेत्र की लंबाई अपनी-अपनी शेष रही कृष्टि प्रमाण होती है । प्रत्येक आयत क्षेत्र की चौड़ाई (पूर्व संग्रह कृष्टि की घात कृष्टि × चय) प्रमाण होती है ।
- यह आयत क्षेत्र स्वरूप द्रव्य अपने-अपने घात द्रव्य से ग्रहण करके क्रमश: माया की तृतीय संग्रह से क्रोध की प्रथम संग्रह तक देने पर सर्वत्र परस्थान गोपुच्छ का सद्भाव होता है ।
- इस प्रकार व्यय द्रव्य और आयत द्रव्य देने से सर्व कृष्टियों में गोपुच्छा बनी रही ।

शेष बहुभाग द्रव्य

- घात द्रव्य में से ये दो द्रव्य देने के पश्चात् घात द्रव्य का असंख्यात बहुभाग द्रव्य शेष रहा । क्योंकि उपर्युक्त दो द्रव्य घात द्रव्य का असंख्यातवां भागमात्र हैं ।
- इस असंख्यात बहुभाग मात्र सर्व घातद्रव्य को सर्व 12 संग्रह कृष्टियों में चयहीन क्रम से देता है ।
- इस शेष द्रव्य को मध्यमधन आदि विधान से लोभ की तृतीय संग्रह से क्रोध की प्रथम संग्रह की अंतिम कृष्टि तक चयहीन क्रम से देता है ।
- इस प्रकार अवशेष रहा घात द्रव्य समाप्त होता है । एवं गोपुच्छ का सद्भाव भी बना रहता है ।

उदयगदसंगहस्स य, मज्झिमखंडादिकरणमेदेण ।
दव्वेण होदि णियमा, एवं सव्वेसु समयेसु ॥528॥

- अन्वयार्थ: (उदयगदसंगहस्स य) उदयप्राप्त संग्रह कृष्टि के (एदेण दव्वेण) इस घात द्रव्य के द्वारा ही (मज्झिमखंडादिकरणं) मध्यम-खंडादिकरण (णियमा) नियम से (होदि) होता है।
- (एवं) इस प्रकार विधान (सव्वेसु समयेसु) सर्व समयों में होता है ॥528॥

www.JainKosh.org

वेदन कृष्टि के घात-द्रव्य का एक भाग

जिस संग्रह कृष्टि का वेदन करता है, उस संग्रह कृष्टि में आय द्रव्य का अभाव है । इसलिए आगे कहे जाने वाले मध्यमखंड आदि विधान करने के लिये इस वेदन कृष्टि के घात द्रव्य का एक असंख्यातवां भाग अलग रखना । शेष रहे घात द्रव्य को पूर्वोक्त गाथाओं में कहे क्रमानुसार बांटना ।

आगे भी वेदन की जाने वाली संग्रह कृष्टि का ऐसा ही करना ।

अभी तक घात द्रव्य और व्यय द्रव्य का समायोजन किया । अब आय द्रव्य का विभाजन किस प्रकार होता है – वह कहते हैं ।

आय द्रव्य विभाजन

संक्रमण द्रव्य

- जिसे पहले आय द्रव्य कहा था, वही अब यहाँ से संक्रमण द्रव्य कहलाता है ।

बंध द्रव्य

- जो द्रव्य नवीन समयप्रबद्ध में बंधकर कृष्टिरूप होता है, इसे बंध द्रव्य कहते हैं ।

अधस्तन कृष्टि

- संग्रह कृष्टि के नीचे कुछ नवीन अपूर्व कृष्टियों को करता है, उन्हें अधस्तन कृष्टि कहते हैं ।

अंतर कृष्टि

- जो पूर्व कृष्टियों के मध्य में नवीन कृष्टियों को करता है, उन्हें अंतर कृष्टि कहते हैं ।

पूर्वोक्त बंध द्रव्य और संक्रमण द्रव्य का विभाजन इस प्रकार होता है —

द्रव्य	नवीन अधस्तन कृष्टि	नवीन अंतर कृष्टि	पूर्व कृष्टि
बंध द्रव्य	×	✓	✓
संक्रमण-द्रव्य – 11 संग्रह	✓	✓	✓
क्रोध प्रथम संग्रह	×	×	✓

www.JainKosh.org

हेट्ठाकिट्टिप्पहुदिसु, संकमिदासंखभागमेत्तं तु ।
सेसासंखाभागा, अंतरकिट्टिस्स दव्वं तु ॥529॥

- अन्वयार्थ: (संकमिदासंखभागमेत्तं तु) संक्रमण द्रव्य में से असंख्यातवाँ भाग मात्र द्रव्य (हेट्ठाकिट्टिप्पहुदिसु) अधस्तन कृष्टियों में देता है।
- (सेसासंखाभागा) शेष असंख्यात बहुभाग प्रमाण (दव्वं) द्रव्य (अंतरकिट्टिस्स) अंतर-कृष्टि का है ॥529॥

संक्रमण द्रव्य का विभाजन

संक्रमण द्रव्य	अधस्तन कृष्टियों में	अंतर कृष्टियों में
11 संग्रह कृष्टि	असंख्यातवां भाग	शेष बहुभाग
क्रोध की प्रथम संग्रह	×	सर्व द्रव्य

बंधद्दव्वाणंतिमभागं पुण पुव्वकिट्टिपडिबद्धं ।
सेसाणंता भागा, अंतरकिट्टिस्स दव्वं तु ॥530॥

- अन्वयार्थ: (बंधद्दव्वाणंतिमभागं पुण) बन्धद्रव्य का अनन्तवां भागमात्र द्रव्य (पुव्वकिट्टिपडिबद्धं) पूर्वकृष्टिसंबंधी है।
- (तु) और (सेसाणंता भागा) शेष अनन्त बहुभाग मात्र (अंतरकिट्टिस्स दव्वं) अंतर-कृष्टिसंबंधी द्रव्य है ॥530॥

www.JainKosh.org

कोहस्स पढमकिट्टि, मोत्तूणेकारसंगहाणं तु ।
बंधणसंकमदव्वादपुव्वकिट्टिं करेदी हु ॥531॥

- अन्वयार्थ: (कोहस्स पढमकिट्टि मोत्तूण) क्रोध की प्रथम संग्रह-कृष्टि बिना शेष (एकारसंगहाणं तु) ग्यारह संग्रह-कृष्टियों के (बंधणसंकमदव्वाद) बंध और संक्रमण द्रव्य द्वारा (अपुव्वकिट्टिं) अपूर्व-कृष्टियों को (करेदी हु) करता है ॥531॥

अपूर्व कृष्टियाँ कौन-से द्रव्य द्वारा?

संग्रह कृष्टि	संक्रमण द्रव्य	बंध द्रव्य
क्रोध की प्रथम	×	✓
मान, माया, लोभ की प्रथम	✓	✓
शेष 8 संग्रह	✓	×

क्रोध की प्रथम संग्रह में संक्रमण द्रव्य का अभाव है । इसलिये इसमें संक्रमण द्रव्य द्वारा नवीन कृष्टियाँ नहीं की जाती है ।

प्रत्येक कषाय की प्रथम संग्रह कृष्टि का ही बंध होने से मात्र प्रथम संग्रह में ही बंध द्रव्य से नवीन कृष्टियाँ की जाती हैं।

शेष 8 संग्रह में बंध द्रव्य नहीं होने से वहाँ बंधद्रव्य द्वारा नवीन कृष्टियाँ नहीं की हैं ।

www.Jain

बंधणदव्वादो पुण, चदुसु ट्ठाणेसु पढमकिट्टीसु ।
बंधुप्पवकिट्टीदो, संकमकिट्टी असंखगुणा ॥532॥

- अन्वयार्थ: (बंधणदव्वादो पुण) बंधद्रव्य से (पढमकिट्टीसु) प्रथम संग्रह-कृष्टिरूप (चदुसु ट्ठाणेसु) चार स्थानों में अपूर्व-कृष्टियाँ करता है।
- (बंधुप्पवकिट्टीदो) बन्ध द्रव्य द्वारा उत्पन्न अपूर्व-कृष्टियों की अपेक्षा (संकमकिट्टी) संक्रमण द्रव्य द्वारा उत्पन्न कृष्टियाँ (असंख्यातगुणा) असंख्यातगुणी हैं ॥532॥

अपूर्व कृष्टि रचना

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि के वेदन के समय चारों कषायों की प्रथम कृष्टि का बंध होता है । इस बंध द्रव्य के द्वारा चारों कषायों की प्रथम संग्रह में अपूर्व कृष्टियाँ बनाता है ।

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि को छोड़कर शेष मान, माया, लोभ की प्रथम संग्रह कृष्टि में बंध द्रव्य एवं संक्रमण द्रव्य – दोनों के द्वारा अपूर्व कृष्टियाँ बनाता है ।

वहाँ बंध की अपूर्व कृष्टियों से संक्रमण की अपूर्व कृष्टियाँ असंख्यात गुणी है । गुणकार $\frac{\text{पल्य}}{\text{असंख्यात}}$ है ।

इन दोनों द्रव्यों द्वारा रचित अपूर्व कृष्टियाँ संख्या में अनंत हैं ।

संखातीदगुणाणि य, पल्लस्सादिमपदाणि गंतूण ।
एक्केक्कबंधकिट्टी, किट्टीणं अंतरे होदि ॥533॥

- अन्वयार्थ: (पल्लस्सादिमपदाणि संखातीदगुणाणि) पल्य के प्रथम वर्गमूल के असंख्यातगुणे स्थान (गंतूण) आगे जाकर (किट्टीणं अंतरे) कृष्टियों के अन्तराल में (एक्केक्क बंधकिट्टी) एक-एक बंध-कृष्टि (होदि) होती है ॥533॥

बंध कृष्टियों का अंतराल

जिन संग्रह कृष्टियों का बंध होता है, उनमें से असंख्यातवां भाग नीचे और ऊपर की अंतर कृष्टियाँ बंध-योग्य नहीं हैं । मध्य की बहुभाग प्रमाण कृष्टियाँ बंध-योग्य हैं ।

इन बंध-योग्य कृष्टियों के मध्य में अपूर्व बंधकृष्टियाँ रची जाती है ।

बंध-योग्य जघन्य कृष्टि से $(\sqrt{\text{पल्य}} \times \text{असंख्यात})$ स्थान ऊपर जाकर प्रथम अपूर्व कृष्टि रचता है ।

पुनः इतने ही अंतराल पश्चात् दूसरी अपूर्व बंध कृष्टि रचता है ।

बंध की अपूर्व कृष्टियाँ

अंतर का प्रमाण
$\sqrt{\text{पल्य}} \times \partial$

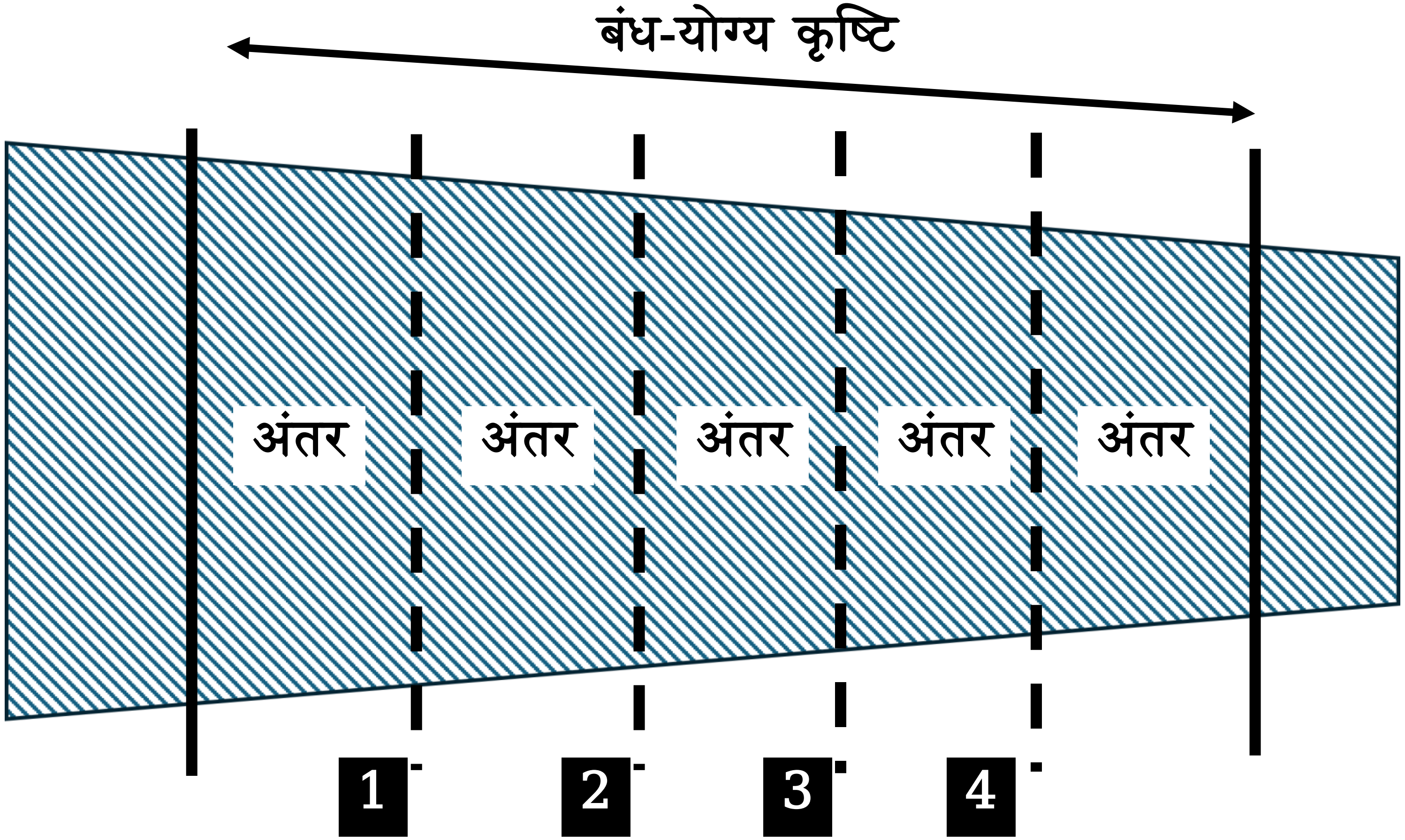

ऐसे क्रम-क्रम से ($\sqrt{\text{पल्य}} \times$ असंख्यात) स्थान जाकर तीसरी, चौथी आदि अपूर्व बंधकृष्टि रचता है ।

बंध-योग्य उत्कृष्ट कृष्टि से $\sqrt{\text{पल्य}} \times \partial$ स्थान नीचे जाकर बंध की अंतिम अपूर्व कृष्टि रचता है ।

इनके अतिरिक्त जो बंध-योग्य पूर्व कृष्टियाँ हैं, उनमें भी बंध द्रव्य दिया जाता है ।

www.JainKosh.org

दिज्जदि अणंतभागेणूणकमं बंधगे य णंतगुणं ।
तण्णंतरे णंतगुणूणं तत्तोणंतभागूणं ॥534॥

- अन्वयार्थ: बध्यमान द्रव्य (अणंतभागेणूणकमं) प्रथम अनन्तवें भागहीन क्रम से (दिज्जदि) दिया जाता है।
- पश्चात् (बंधगे य) बन्ध की अपूर्व-कृष्टि में (णंतगुणं) अनन्तगुणा द्रव्य दिया जाता है।
- (तण्णंतरे) उसके अनन्तर पूर्वकृष्टि में (णंतगुणूणं) अनन्तगुणा हीन द्रव्य दिया जाता है।
- (तत्तोणंतभागूणं) उसके अनन्तर अनन्तवाँ भाग हीनक्रम से द्रव्य दिया जाता है ॥534॥

www.JainKosh.org

बंध द्रव्य का देयक्रम

बंध द्रव्य पूर्व कृष्टि और अपूर्व कृष्टि दोनों में दिया जाता है । जितनी बंध-योग्य कृष्टियाँ हैं, उन सभी में बंध द्रव्य दिया जाता है ।

पूर्व कृष्टियों का बंध द्रव्य; समयप्रबद्ध का अनंतवां भाग है तथा अपूर्व कृष्टियों को प्राप्त बंध द्रव्य; समयप्रबद्ध का अनंत बहुभाग है ।

इस पूर्व कृष्टि बंध-द्रव्य में से बंध-योग्य जघन्य कृष्टि में अधिक द्रव्य देता है । उससे एक चयहीन (अनंतवें भाग प्रमाण) द्रव्य द्वितीय बंध-योग्य कृष्टि में देता है । ऐसे $\sqrt{\text{पल्य}} \times \partial$ प्रमाण स्थान तक चयहीन क्रम से द्रव्य देता है ।

इसके पश्चात् अपूर्व बंध कृष्टि में अनंतगुणा द्रव्य देता है क्योंकि यह कृष्टि इस बंध-द्रव्य द्वारा ही उत्पन्न हुई है ।

बंध द्रव्य का देयक्रम

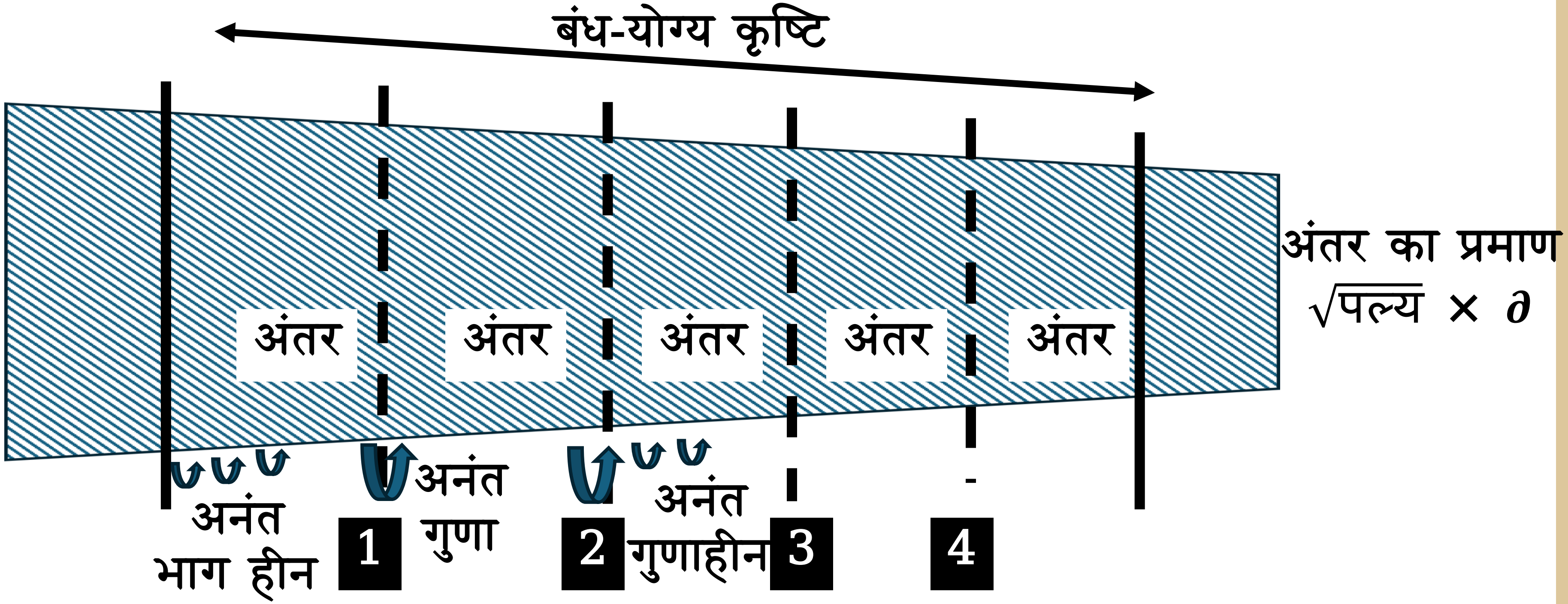

इसके पश्चात् पूर्व कृष्टि में अनंतगुणाहीन द्रव्य देता है क्योंकि यहाँ पर पूर्व कृष्टि का सद्भाव है ही ।

पुनः अनंतवें भाग हीन क्रम से पूर्व कृष्टियों में द्रव्य दिया जाता है ।

अपूर्व कृष्टि प्राप्त होने पर अनंतगुणा, पूर्व कृष्टि में अनंतगुणाहीन, द्वितीय आदि पूर्व कृष्टियों में अनंतभागहीन – इस प्रकार बंधद्रव्य के देने का विभाग होता है । ऐसे द्रव्य देने से पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में गोपुच्छ रचना रहती है ।

संकमदो किट्टीणं, संगहकिट्टीणमंतरे होदि ।
संगह अंतरजादो, किट्टी अंतरभवा असंखगुणा ॥535॥

- अन्वयार्थ: (संकमदो) संक्रमण द्रव्य के द्वारा (किट्टीणं) अवयव कृष्टियों के और (संगहकिट्टीणं) संग्रह-कृष्टियों के (अन्तरे) अन्तराल में अपूर्व कृष्टियाँ (होदि) उत्पन्न होती हैं।
- (संगह अंतरजादो) संग्रह-कृष्टियों के अन्तराल में उत्पन्न हुई कृष्टियों से (अंतरभवा किट्टी) अवयव-कृष्टियों के अंतराल में उत्पन्न हुई कृष्टियाँ (असंखगुणा) असंख्यातगुणी हैं ॥535॥

संक्रमण द्रव्य की अपूर्व कृष्टियाँ

संक्रमण द्रव्य द्वारा 1) संग्रह-कृष्टि अंतराल में तथा 2) कृष्टि अंतराल में अपूर्व कृष्टि बनायी जाती है ।

1) संग्रह-कृष्टि अंतराल में अपूर्व कृष्टि

- संक्रमण द्रव्य द्वारा 11 संग्रह कृष्टियों के नीचे अधस्तन अपूर्व कृष्टियाँ रची जाती हैं । इन्हें 'संग्रह कृष्टि के अंतराल में उत्पन्न हुई कृष्टियाँ' कहा जाता है ।
- ये कुल संक्रमण द्रव्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण द्रव्य से उत्पन्न होती हैं ।

2) कृष्टि अंतराल में अपूर्व कृष्टि

- शेष असंख्यात द्रव्य के द्वारा 11 संग्रह कृष्टियों के मध्य में अपूर्व कृष्टि बनाई जाती है । इन्हें 'कृष्टियों के अंतराल में उत्पन्न अपूर्व कृष्टि' कहते हैं ।
- चूंकि इनका द्रव्य अधस्तन अपूर्व कृष्टियों से असंख्यात गुणा है। इसलिये इन अपूर्व कृष्टियों की संख्या भी अधस्तन कृष्टियों से असंख्यात गुणी है ।

www.JainKosh.org

संक्रमण द्रव्य द्वारा अपूर्व कृष्टि की रचना

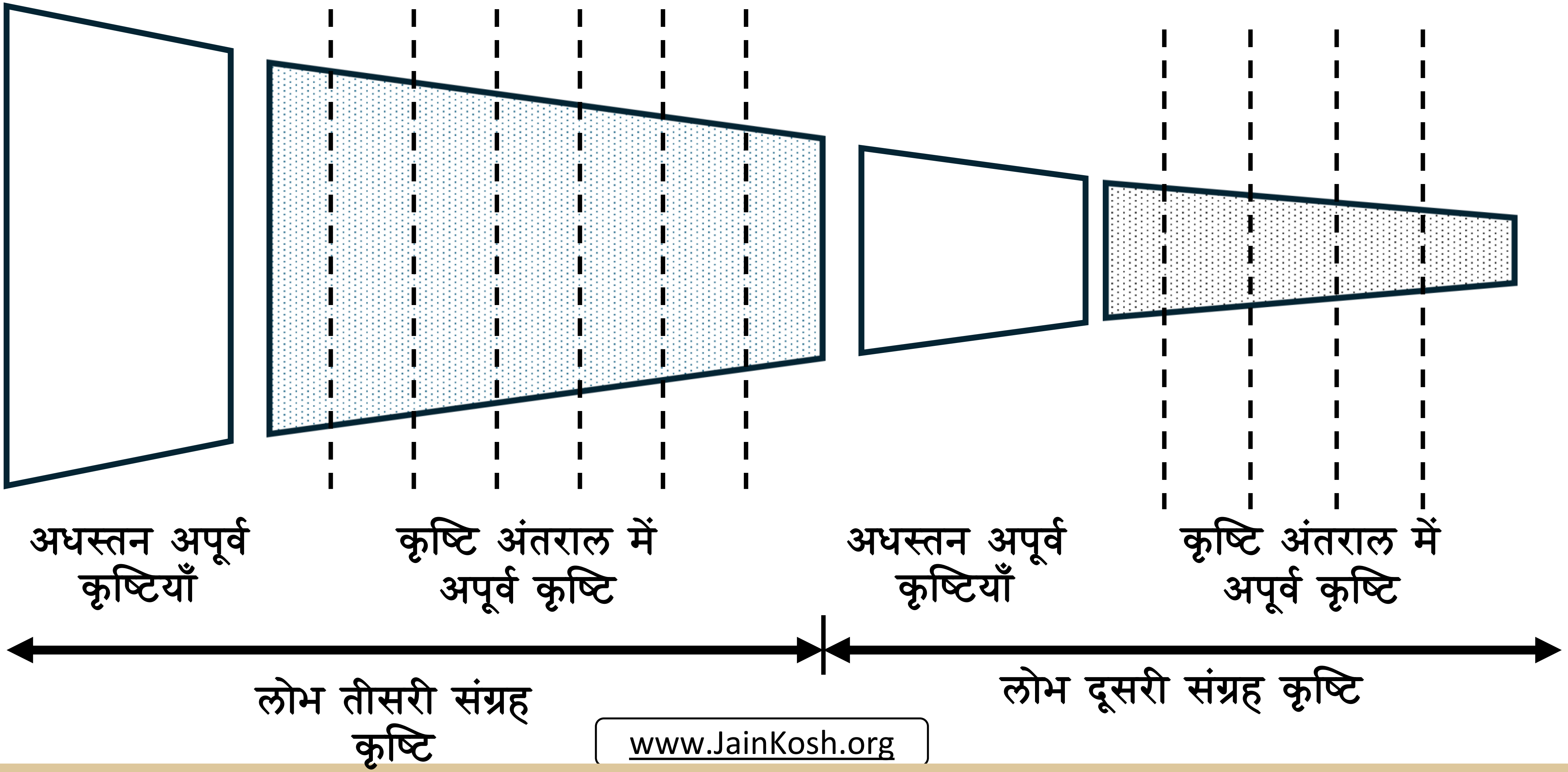

www.JainKosh.org

संगहअंतरजाणं, अपुव्वकिट्टिं व बंधकिट्टिं वा ।
इदराणमंतरं पुण, पल्लपदासंखभागं तु ॥536॥

- अन्वयार्थ: (संगह अंतरजाणं) संग्रह-कृष्टियों के अन्तराल में उत्पन्न कृष्टियों में द्रव्य देने का विधान (अपुव्वकिट्टिं वा) कृष्टिकरणकाल के द्वितीय समय में की गई अपूर्व-कृष्टियों के समान जानना चाहिए।
- (पुण) पुनः (इदराणं) इतर अर्थात् अवयव-कृष्टियों के मध्य में उत्पन्न कृष्टियों का विधान (बंधकिट्टिं वा) बंध-कृष्टियों के समान जानना।
- (तु) परन्तु (अंतरं) दो अपूर्व-कृष्टियों में अंतर (पल्लपदासंखभागं) पल्य के प्रथम वर्गमूल के असंख्यातवें भागमात्र है ॥536 ॥

अधस्तन अपूर्वकृष्टियों में द्रव्य का विभाग

कृष्टिकरण काल में द्वितीयादि समयों में अपूर्व कृष्टियों में द्रव्य देने का विधान कहा है, वैसा ही विधान संक्रमण द्रव्य द्वारा अधस्तन अपूर्व कृष्टि की रचना में जानना । जो अंतर है, वह इस प्रकार है –

कृष्टिकरण काल में अपूर्व कृष्टि	संक्रमण द्रव्य द्वारा अपूर्व कृष्टि
वहाँ कृष्टिकारक के अपूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि से पूर्व कृष्टि की जघन्य कृष्टि में असंख्यातभागहीन द्रव्य दिया जाता है ।	यहाँ पर अधस्तन अंतिम अपूर्व कृष्टि से पूर्व कृष्टि की प्रथम कृष्टि में असंख्यात गुणाहीन है क्योंकि यहाँ अधस्तन कृष्टि द्रव्य से मध्यमखंड असंख्यात गुणाहीन है ।
कृष्टिकारक के पूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि से अगली संग्रह की जघन्य कृष्टि में असंख्यात भाग अधिक द्रव्य दिया जाता है ।	यहाँ पर पूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि से अपूर्व कृष्टि की प्रथम कृष्टि में असंख्यात गुणा द्रव्य दिया जाता है । क्योंकि मध्यमखंड से अधस्तन कृष्टि द्रव्य असंख्यात गुणा है ।

कृष्टि अंतराल में द्रव्य का विभाग

कृष्टि अंतराल में रचित अपूर्व कृष्टियों में देय द्रव्य की प्ररूपणा बंध कृष्टि के समान ही जानना चाहिए ।

परंतु दोनों के अंतराल में अंतर है ।

बंध की अपूर्व कृष्टियों का अंतराल $\sqrt{\text{पल्य}} \times \partial$ है । परंतु संक्रमण द्रव्य की अपूर्व कृष्टियों का अंतराल $\frac{\sqrt{\text{प}}}{\partial}$ है ।

अर्थात् बंध की अपूर्व कृष्टियों की अपेक्षा; संक्रमण की अपूर्व कृष्टियाँ अल्प अंतर (असंख्यात गुणाहीन) जाकर बनती हैं ।

www.jainkosh.org

पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में संक्रमण द्रव्य

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में आय द्रव्य का अभाव है । अत: इसमें दिया जाने वाला चार प्रकार का शीर्ष द्रव्य, मध्यमखंड आदि द्रव्य; घात द्रव्य से ग्रहण किया जाता है ।

आगे जहाँ-जहाँ संक्रमण द्रव्य से द्रव्य लेकर अलग-अलग खंडों में बांटना हो, वहाँ क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में यह द्रव्य घात द्रव्य से प्राप्त होगा; शेष 11 संग्रह कृष्टियों में वह द्रव्य संक्रमण द्रव्य से प्राप्त होगा । सामान्य से सभी को संक्रमण द्रव्य कहेंगे ।

अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य

लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि हेतु अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य

गच्छ = लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि आयाम – 1

विशेष की संदृष्टि 'वि'

आदि = 'वि'; चय = 'वि'

अन्य संग्रह कृष्टियों हेतु अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य

गच्छ = विवक्षित संग्रह कृष्टि का आयाम

आदि = (पूर्व की संग्रह कृष्टियों का आयाम) × वि

चय = 'वि'

इस अधस्तन शीर्ष विशेष द्रव्य को संक्रमण द्रव्य से ग्रहण करके पूर्व कृष्टियों में दें ।

ऐसा करने पर सर्व पूर्व कृष्टियों का आयाम लोभ की तीसरी संग्रह की प्रथम कृष्टि के समान होता है ।

मध्यमखंड द्रव्य

लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि की जघन्य कृष्टि को (अपकर्षण भागहार × असंख्यात) से भाग देने पर मध्यमखंड का प्रमाण आता है ।

$$\text{एक मध्यमखंड} = \frac{\text{लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि की जघन्य कृष्टि}}{\text{अपकर्षण भागहार} \times \text{असंख्यात}}$$

एक मध्यमखंड को सर्व पूर्व कृष्टियों के प्रमाण से गुणा करने पर कुल मध्यमखंड का प्रमाण आता है । प्रत्येक कृष्टि को एक-एक मध्यम खंड देने पर सर्व कृष्टियों का प्रमाण समान ही रहता है ।

यह द्रव्य भी संक्रमण द्रव्य से ग्रहण करके दिया जाता है ।

www.jainkosh.org

अधस्तन अपूर्व कृष्टि द्रव्य

(लोभ की जघन्य कृष्टि + एक मध्यमखंड) = एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य है । इसे अपनी-अपनी अधस्तन कृष्टियों की संख्या से गुणा करने पर अधस्तन अपूर्व कृष्टि संबंधी द्रव्य आता है ।

$$\text{अधस्तन अपूर्व कृष्टियाँ} = \frac{\text{पूर्व कृष्टियाँ}}{\text{अपकर्षण भागहार} \times \text{असंख्यात}}$$

इन अधस्तन अपूर्व कृष्टि संबंधी द्रव्य को संक्रमण द्रव्य से ग्रहण करके देना । यह अधस्तन अपूर्व कृष्टियाँ क्रोध की प्रथम संग्रह को छोड़कर शेष 11 संग्रह में ही होती है । इसलिये उनके संक्रमण द्रव्य से ही वहाँ द्रव्य देना ।

ऐसा करने से पूर्व-अपूर्व सारी कृष्टियों का द्रव्य नीचे से ऊपर तक सर्वत्र सदृश हो गया ।

उभय द्रव्य विशेष द्रव्य

$$\text{एक उभय द्रव्यविशेष} = \frac{\text{सर्वद्रव्य}}{\text{गच्छ} \times \left(2\,\text{गुणहानि} - \frac{\text{गच्छ}-1}{2}\right)}$$

गच्छ = पूर्व-अपूर्व कृष्टियों का प्रमाण

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि की अंतिम कृष्टि में एक, द्विचरम में दो, त्रिचरम में तीन – इस प्रकार क्रम से एक-एक उभयद्रव्यविशेष बढ़ाते हुए क्रोध की प्रथम संग्रह की प्रथम कृष्टि तक चय देना। यह क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का उभयद्रव्यविशेषद्रव्य है।

इसमें से $\frac{\text{एक उभयद्रव्यविशेष}}{\text{अनंत}}$ प्रमाण द्रव्य; बंध द्रव्य से प्राप्त होगा। इसलिये इतना अनंतवां भाग कम करके शेष द्रव्य; घात द्रव्य से ग्रहण करके देना।

ये चारों द्रव्य देकर क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का घात द्रव्य समाप्त हुआ।

इसके आगे क्रोध की द्वितीय संग्रह कृष्टि में उभयद्रव्यविशेषद्रव्य देना है । इसकी अंतिम कृष्टि में (व्यतीत हो चुकी कृष्टि आयाम + 1) प्रमाण चय दिये जाते हैं । इसके आगे एक-एक चय बढ़ते क्रम में अपनी प्रथम अपूर्व कृष्टि तक देता है ।

गच्छ = क्रोध की द्वितीय संग्रह की पूर्व-अपूर्व कृष्टियाँ क्योंकि नवीन कृष्टियों का द्रव्य भी गोपुच्छाकार होता है ।

यह द्वितीय कृष्टि का उभयद्रव्यविशेष अपने संक्रमण द्रव्य से ग्रहण करके देता है ।

इसी प्रकार आगे भी बढ़ते क्रम से प्रत्येक संग्रहकृष्टि में उभयद्रव्यविशेष द्रव्य अपने-अपने संक्रमण द्रव्य में से देता है । इतना विशेष है कि जिन संग्रह कृष्टियों का बंध होता है, उनके उभयद्रव्यविशेष में से $\frac{\text{एक उभयद्रव्यविशेष}}{\text{अनंत}}$ प्रमाण द्रव्य कम करें । क्योंकि इतना द्रव्य बंधद्रव्य में से प्राप्त होने वाला है ।

इस प्रकार यह संक्रमण द्रव्य देने से पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में एक गोपुच्छ की रचना होती है ।

www.JainKosh.org

अंतर अपूर्व कृष्टि द्रव्य

11 संग्रह कृष्टियों के आय द्रव्य में से उपर्युक्त चार द्रव्य घटा देने पर बहुभाग द्रव्य शेष रहता है । इस बहुभाग द्रव्य के द्वारा कृष्टि के मध्य में अंतर अपूर्व कृष्टि रचता है ।

एक मध्यम खंड + लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि की प्रथम कृष्टि = एक समान खंड का प्रमाण है । इतना द्रव्य प्रत्येक संग्रह कृष्टि की अवयव कृष्टि में पाया ही जाता है ।

इस एक खंड के द्रव्य का प्रमाण = $\frac{\text{व १२}^{++}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}$

लोभ की तृतीय संग्रह का शेष आय द्रव्य = $\frac{\text{व १२ | २}}{\text{24 | ओ}}$ -

1 अपूर्व कृष्टि का द्रव्य $\frac{\text{व १२}^{++}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}$ है, तो $\frac{\text{व १२ | २}}{\text{24 | ओ}}$ - द्रव्य से कितनी अपूर्व कृष्टि होंगी ?

$$\frac{\text{व १२ | २}^{-}}{\frac{\text{24 | ओ | व १२}^{++}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}} = \frac{2^{-}}{\frac{\text{24 | ओ}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}} = \frac{\text{४}}{\text{ख | 24 | }\frac{\text{ओ}}{2^{-}}}^{+}$$

अपूर्व कृष्टियों का अंतराल

यह लोभ की तीसरी संग्रह कृष्टि की अपूर्व कृष्टियों की संख्या है । इसी प्रकार शेष 10 संग्रह कृष्टियों के शेष आय द्रव्य से बनने वाली अंतर अपूर्व कृष्टियाँ जाननी चाहिए ।

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में आयद्रव्य नहीं होने से अंतर अपूर्व कृष्टि नहीं है ।

ये अंतर अपूर्व कृष्टियाँ; पूर्व कृष्टियों के मध्य में सदृश अंतर देकर बीच-बीच में रची गयी हैं ।

$$\text{इन कृष्टियों का अंतराल} = \frac{\text{पूर्व कृष्टियों की संख्या}}{\text{अपूर्व कृष्टियों की संख्या}}$$

$$\text{लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि में अपूर्व कृष्टियों का अंतराल} = \frac{\frac{\overline{\text{४}_{+}}}{\text{ख}_{24}}\text{४}}{\text{ख}_{24\times}\frac{\text{ओ}}{2-}} = \frac{\text{ओ}}{2-}$$

इसी प्रकार शेष संग्रह कृष्टियों में भी अंतराल लाना चाहिए ।

संक्रमणांतर कृष्टियों का प्रमाण, अंतराल

	लोभ			माया		
	तृतीय	द्वितीय	प्रथम	तृतीय	द्वितीय	प्रथम
कृष्टियों का प्रमाण	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{2-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{1-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{3-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{2-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{1-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{3-}}$
अंतराल का प्रमाण	$\frac{\text{ओ}}{2-}$	$\frac{\text{ओ}}{1-}$	$\frac{\text{ओ}}{3-}$	$\frac{\text{ओ}}{2-}$	$\frac{\text{ओ}}{1-}$	$\frac{\text{ओ}}{3-}$

	मान			क्रोध		
	तृतीय	द्वितीय	प्रथम	तृतीय	द्वितीय	प्रथम
कृष्टियों का प्रमाण	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{2-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{1-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{15-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{14-}}$	$\frac{\text{४}+}{\text{ख}\mid 24\mid \frac{\text{ओ}}{182-}}$	—
अंतराल का प्रमाण	$\frac{\text{ओ}}{2-}$	$\frac{\text{ओ}}{1-}$	$\frac{\text{ओ}}{15-}$	$\frac{\text{ओ}}{14-}$	$\frac{\text{ओ}}{182-}$	—

जितना आय द्रव्य अधिक है, अंतराल उतना कम है ।

जितना आय द्रव्य अधिक है, अंतर अपूर्व कृष्टियाँ उतनी अधिक हैं ।

इस प्रकार संक्रमण द्रव्य द्वारा गोपुच्छ एवं अपूर्व कृष्टि आदि का कथन पूर्ण हुआ ।

प्रश्न- अपूर्व अंतर कृष्टियों में चय नहीं दिया, तब उसका गोपुच्छ कैसे बनेगा ?

उत्तर- पहले जो उभयद्रव्यविशेष द्रव्य कहा है, वहीं तब इन अंतर अपूर्व कृष्टियों को भी ग्रहण कर चयद्रव्य दिया है । यहाँ समान खंड देकर गोपुच्छ का सद्भाव किया गया ।

www.JainKosh.org

बंध द्रव्य का विभाग

बंध द्रव्य को बंध-योग्य कृष्टियों में ही दिया जाता है । इसका 4 प्रकार का विभाग है:

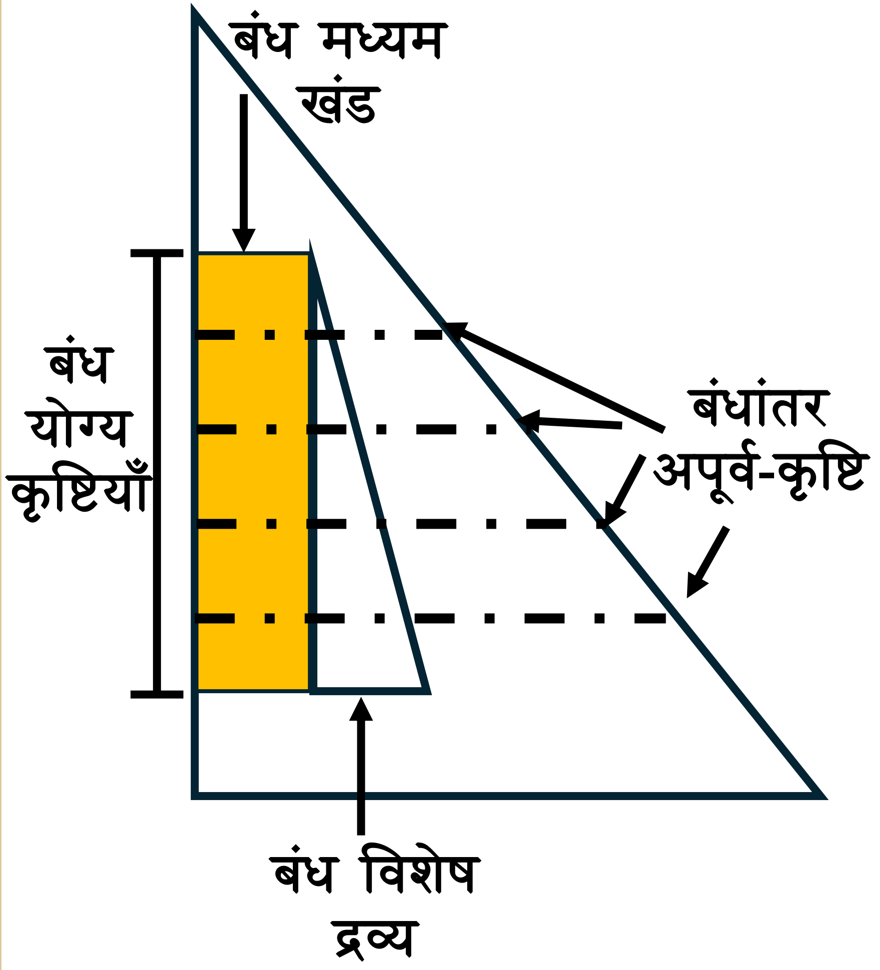

द्रव्य का नाम	बंध द्रव्य का प्रमाण	कहाँ देना है?
बंधांतर अपूर्व-कृष्टि सदृश खंड	बंध द्रव्य का अनंत बहुभाग	बंधांतर अपूर्व-कृष्टियों में
बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य	बंध द्रव्य का अनंतवा भाग	बंधांतर अपूर्व-कृष्टियों में
बंध विशेष द्रव्य	बंध द्रव्य का अनंतवा भाग	बंध-योग्य सर्व कृष्टियों में
बंध मध्यम खंड	बंध द्रव्य का अनंतवा भाग	बंध-योग्य सर्व कृष्टियों में

जहाँ-जहाँ उभयविशेष द्रव्य में से कुछ द्रव्य; बंध-द्रव्य में से प्राप्त होने के कारण कम किया है; वह द्रव्य उपर्युक्त बंध-विशेष द्रव्य और बंध मध्यम खंड से प्राप्त होता है ।

बंध द्रव्य द्वारा अपूर्व कृष्टि

मोहनीय के नवक समयप्रबद्ध को चार कषायों में प्रदेश-बंध के नियमानुसार दें ।

तब स्थूल रूप से इतना बंध द्रव्य चारों कषायों को प्राप्त हुआ –

मान	क्रोध	माया	लोभ
$\frac{स}{4} \equiv$	$\frac{स}{4} =$	$\frac{स}{4} -$	$\frac{स}{4} +$

इस बंध द्रव्य में से अंतर कृष्टियों का चयधन और पूर्व में कहा गया एक उभयविशेष का अनंतवां भाग कम करें । इसे आगे प्रयोग करेंगे ।

शेष बहुभाग द्रव्य के द्वारा बंधातर अपूर्व कृष्टियों की संख्या एवं अंतराल का प्रमाण आता है । इसी द्रव्य से बंधांतर अपूर्व कृष्टियाँ बनायी जाती हैं ।

बंधांतर अपूर्व कृष्टि संख्या

1 समान खंड = लोभ की तृतीय संग्रह की प्रथम कृष्टि + मध्यमखंड; इसका प्रमाण $\frac{\text{स १२}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}$ +

$\frac{\text{स १२}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}$ + द्रव्य द्वारा 1 अंतर कृष्टि होती है, तो $\frac{\text{स}}{4} \equiv$ द्रव्य द्वारा कितनी अंतर कृष्टि होती है?

$$\frac{\text{स}}{4} \equiv \times \frac{1}{\frac{\text{स १२}}{\frac{\text{४}}{\text{ख}^{+}}}} = \frac{\text{४}}{\text{ख} \times 4 \times \text{१२}}$$

यहाँ १२ याने डेढ़ गुणहानि है । उसे उसी रूप में लिखने पर $\frac{\text{४}}{\text{ख} \,|\, 4 \,|\, \text{८} \times \frac{3}{2}}+ = \frac{\text{४}}{\text{ख} \,|\, \text{८} \,|\, 6}+$

अर्थात् पूर्व कृष्टियों के प्रमाण को 6 गुणहानि का भाग देने पर जितना प्रमाण आता है, उतनी बंध द्रव्य से उत्पन्न अंतर कृष्टियों का प्रमाण होता है ।

इतना विशेष है कि मान में सबसे कम, क्रोध में कुछ अधिक; माया, लोभ में विशेष अधिक-अधिक कृष्टियाँ बनती हैं । क्योंकि उनका बंध द्रव्य विशेष-विशेष अधिक है।

ये बंध कृष्टियाँ प्रत्येक कषाय की प्रथम संग्रह में ही रची जा रही है क्योंकि प्रत्येक कषाय की प्रथम संग्रह का ही बंध हो रहा है ।

बंधांतर अपूर्व कृष्टियों से संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियाँ असंख्यात गुणी हैं ।

अर्थात् $\frac{४}{ख।८।6}+$ से $\frac{४}{ख_{24}।ओ}+$ असंख्यात गुणा है । (गुणहानि आयाम से अपकर्षण भागहार असंख्यात गुणाहीन है ।)

www.JainKosh.org

बंधांतर अपूर्व कृष्टियों का अंतराल

बंध द्रव्य द्वारा की गयी दो अपूर्व कृष्टियों के मध्य जितनी पूर्व कृष्टियाँ प्राप्त होती है, उसे बंधांतर अपूर्व कृष्टियों का अंतराल कहते हैं ।

$$\text{बंधांतर कृष्टियों का अंतराल} = \frac{\text{बंध–योग्य मध्य की कृष्टियाँ}}{\text{बंधांतर अपूर्व कृष्टियाँ}}$$

(यहाँ बंध-योग्य मध्य कृष्टियों में संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियाँ शामिल हैं ।)

$$\frac{\frac{४}{\text{ख}_{24}}^{+}}{\frac{४}{\text{ख}|८|_{6}}^{+}} = \frac{८|6}{24} = \frac{८}{4}$$

(याने गुणहानि का चतुर्थ भाग; बंधांतर का अंतराल है ।

लोभ, माया और मान में बंधांतर का अंतराल $\frac{८}{4}$ है । परंतु क्रोध में यह अंतराल $\frac{८}{4} \times 13$ है । क्योंकि क्रोध की पूर्व कृष्टियों का आयाम 13 गुणा है । इसलिये बंधांतर कृष्टि अधिक अंतराल में बनेगी ।

बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य

- जो पूर्वोक्त बंधांतर अपूर्व कृष्टि की रचना की, उसमें चय द्रव्य देना शेष है । चयद्रव्य दे देने पर यह गोपुच्छाकार रचना होगी । इसे बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य कहते हैं ।
- बंध द्रव्य में से जो 'अंतर कृष्टियों का चयधन' निकाल कर पृथक् स्थापित किया था, उसमें से यह द्रव्य लेकर दिया जाता है ।
- बंधांतर अपूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि में पूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि से जितनी कृष्टियों के नीचे जाकर यह बंधांतर कृष्टि प्राप्त होती है – उतने चय देना है । यह 'आदि' का प्रमाण है ।
- (बंधांतर अपूर्व कृष्टियों का अंतराल + 1) × चय = उत्तर का प्रमाण है ।
- बंधांतर अपूर्व कृष्टियों का प्रमाण = गच्छ का प्रमाण है । इसके द्वारा बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य का संकलनधन आता है ।

बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य

$$\text{संकलन धन} = \{(\frac{\text{गच्छ}-1}{2} \times \text{चय}) + \text{आदि}\} \times \text{गच्छ}$$

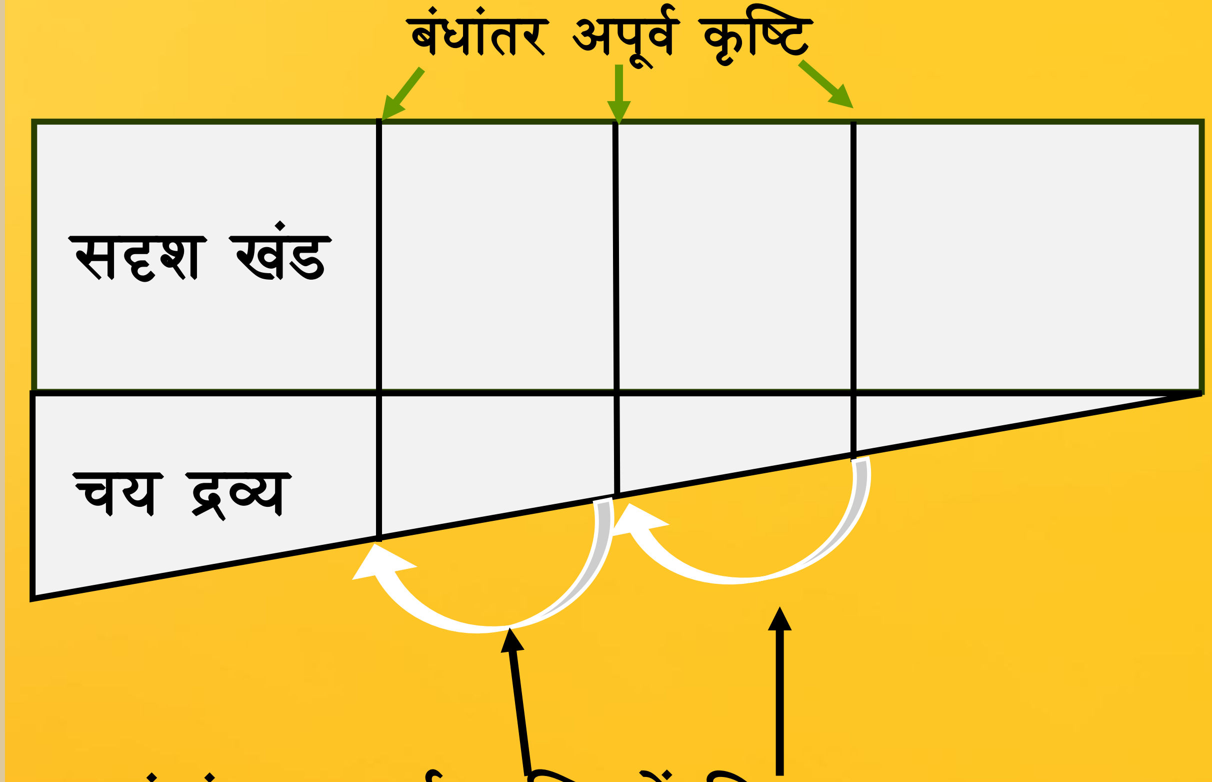

इन बंधांतर अपूर्व कृष्टि में कितना द्रव्य अधिक करना है ? (बंधांतर कृष्टि अंतराल + 1) × चय

यहाँ बंधांतर कृष्टि उभयविशेष द्रव्य का संकलनधन निकालने हेतु चय का प्रमाण एक चयमात्र नहीं है । क्योंकि अंतराल में अपूर्व कृष्टि नहीं रची है ।

अंतराल में पूर्व कृष्टियों का सद्भाव है जो गोपुच्छाकार में हैं ही । इसलिये अंतराल के पश्चात् जो नवीन कृष्टि है, उसमें एक चय अधिक ना होकर (अंतराल+1) प्रमाण चय देने से गोपुच्छ बनेगा ।

www.JainKosh.org

अनंतवे भाग बंध-द्रव्य का विभाजन - बंध विशेष द्रव्य

जो बंध-योग्य पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में चयहीन क्रम से द्रव्य दिया जाता है, उसे बंध विशेष द्रव्य कहते हैं ।

जो संक्रमणांतर कृष्टियों के बनाते समय बंध-योग्य कृष्टियों में द्रव्य देते हुए उभयद्रव्यविशेष में से कुछ कम करके दिया था, वह कम किया द्रव्य इस बंध द्रव्य में से दिया जाता है ।

चूंकि वह भी चयहीन क्रम से है, अतः चय निकालकर चयधन लाते हैं । उतना द्रव्य बंधविशेष द्रव्य कहलाता है ।

गच्छ = बंध की पूर्व-अपूर्व कृष्टि; सर्व द्रव्य = $\frac{\text{समयप्रबद्ध}}{\text{अनंत}}$

इसके द्वारा मध्यमधन आदि सूत्रों द्वारा चय लाना । फिर चयधन लाना ।

अनंतवे भाग बंध-द्रव्य का विभाजन - बंध मध्यमखंड

सर्व द्रव्य – चयधन = शेष द्रव्य

इस शेष द्रव्य को समान खंड करके बंध-योग्य पूर्व-अपूर्व कृष्टियों में देना चाहिए । यह बंध मध्यमखंड कहलाता है ।

एक बंध मध्यमखंड = $\frac{\text{शेष द्रव्य}}{\text{गच्छ}}$

प्रत्येक बंधकृष्टि में यह बंधविशेष द्रव्य और एक मध्यमखंड देने पर जो पहले उभयद्रव्यविशेष में से अनंतवां भाग कम करवाया था, वह पूर्ण होता है ।

इस प्रकार पृथक् रखा हुआ एकभाग भी समाप्त हुआ और सर्व मोहनीय में एक गोपुच्छाकार रचा गया ।

www.JainKosh.org

अंक संदृष्टि

संक्रमण द्रव्य = 6474,

लोभ की प्रथम संग्रह में पूर्व कृष्टियाँ = 12

संक्रमण अपूर्व कृष्टि = 5,

संक्रमण अधस्तन अपूर्व कृष्टि = 2,

बंधांतर अपूर्व कृष्टि = 2

सर्व पूर्व-अपूर्व कृष्टि = 12+5+2+2 = 21 हैं ।

www.JainKosh.org

संक्रमण द्रव्य के 5 विभाग

मध्यम खंड

- मानाकि मध्यमखंड = 10
- कुल संक्रमण कृष्टि = 19 (21 – 2 बंधांतर अपूर्व कृष्टि)
- परंतु 5 कृष्टियों में मध्यमखंड द्रव्य; संक्रमणांतर कृष्टि संबंधी है। उसे अपूर्व कृष्टि द्रव्य में ही दिया है । अतः उतना यहाँ कम किया है (19 – 5 = 14)।
- तो 10×14 = 140 मध्यमखंड द्रव्य

संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि द्रव्य

- 1 अपूर्व कृष्टि द्रव्य = जघन्य कृष्टि + मध्यम खंड
- 200 + 10 = 210
- एक अपूर्व कृष्टि द्रव्य × संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि
- 210 × 5 = 1050

बंध द्रव्य का विभाग

बंध द्रव्य = 1084

बंधांतर समान खंड –

- एक समान खंड × बंधांतर अपूर्व कृष्टि
- 210 × 2 = 420

बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य –

- बंधांतर अपूर्व कृष्टियों में जितने उभयविशेष द्रव्य दिये जाते हैं, उसे बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य कहते हैं ।
- बंध की अपूर्व कृष्टियाँ; पूर्व की अंतिम कृष्टि से आठवीं और बारहवीं कृष्टि है । 8वीं का उभयविशेष द्रव्य 160 और 12वीं का 240 है ।
- इसमें से बंधमध्यमखंड एवं बंधविशेष द्रव्य कम करना है । उनका प्रमाण क्रमश: 20 एवं 28 है । वह कम करने पर 160 + 240 – 20 – 28 = 400 – 48 = 352

www.JainKosh.org

संक्रमण और बंध द्रव्य देने का विधान

लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि में बंध द्रव्य का अभाव है। इसलिये यहाँ केवल संक्रमण द्रव्य दिया जाता है। लोभ की तृतीय संग्रह कृष्टि में 5 प्रकार का द्रव्य कहा है। उसमें प्रत्येक कृष्टि में द्रव्य देने का प्रकार कहते हैं।

सबसे जघन्य अधस्तन अपूर्व कृष्टि में एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य, एक मध्यम खंड, सर्व पूर्व-अपूर्व कृष्टि की संख्या प्रमाण उभयद्रव्यविशेष दिया जाता है। यह द्रव्य आगे कृष्टियों में दिये जाने वाले द्रव्य से सर्वाधिक है।

इसकी दूसरी कृष्टि में एक अधस्तन खंड, एक मध्यम खंड और (पूर्व-अपूर्व कृष्टि प्रमाण – व्यतीत कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य दिया जाता है। अर्थात् एक चयहीन द्रव्य दिया जाता है।

इसी प्रकार से एक-एक चयहीन क्रम से अधस्तन अपूर्व कृष्टियों की अंतिम कृष्टि तक द्रव्य देता है।

पूर्व कृष्टियों में द्रव्य

इसके ऊपर पूर्व कृष्टियों की प्रथम कृष्टि में एक मध्यमखंड और (पूर्व-अपूर्व कृष्टि आयाम – व्यतीत हुई कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य दिया जाता है । अधस्तन अपूर्व कृष्टि की अंतिम कृष्टि में दिये द्रव्य से यह द्रव्य असंख्यात गुणाहीन है क्योंकि मध्यमखंड द्रव्य से एक अधस्तन कृष्टि द्रव्य असंख्यात गुणा है ।

इसके ऊपर द्वितीय कृष्टि में एक अधस्तन शीर्ष विशेष, एक मध्यमखंड और पूर्व से एक कम उभयद्रव्यविशेष द्रव्य दिया जाता है । यहाँ (एक उभयद्रव्यविशेष – एक अधस्तन शीर्ष) प्रमाण द्रव्य कम दिया जाता है ।

इसी प्रकार एक-एक अधस्तन शीर्ष द्रव्य बढ़ते क्रम से तथा एक-एक उभयविशेषद्रव्य कम करते हुए क्रम से अपकर्षण भागहार के अर्ध प्रमाण मात्र पूर्वकृष्टियाँ व्यतीत होने तक देता है । $(\frac{\text{ओ}}{2-})$

अपूर्व-पूर्व कृष्टियों में द्रव्य

इसके ऊपर संक्रमण द्रव्य द्वारा रची गयी अंतर अपूर्व कृष्टि है । इसमें एक संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि द्रव्य तथा (पूर्व-अपूर्व कृष्टि आयाम – व्यतीत कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य निक्षेपण करता है ।

यह द्रव्य पूर्व कृष्टि में दिये द्रव्य से असंख्यात गुणा है । क्योंकि यहाँ दिया गया संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि द्रव्य पूर्व द्रव्यों से असंख्यात गुणा है ।

इसके आगे पूर्व कृष्टि में नीचे व्यतीत हुई पूर्व कृष्टि प्रमाण अधस्तन शीर्ष द्रव्य, एक मध्यम खंड, (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्वापूर्व कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य देता है । यह द्रव्य पूर्व में दिये गए द्रव्य से असंख्यात गुणा हीन है ।

इसके ऊपर एक-एक अधस्तन शीर्ष बढ़ते हुए, एक-एक मध्यमखंड और एक-एक उभयविशेष द्रव्य घटते क्रम से पुनः $(\frac{\text{ओ}}{2-})$ प्रमाण पूर्व कृष्टियों तक देता है ।

www.JainKosh.org

अपूर्व-पूर्व कृष्टियों में द्रव्य

इसके आगे पूर्ववत् संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि में द्रव्य दिया जाता है ।

इसके पश्चात् पुनः पूर्व कृष्टियों में अधस्तन शीर्ष द्रव्य, मध्यमखंड, उभयद्रव्यविशेष द्रव्य दिया जाता है ।

पुनः $\left(\frac{\text{ओ}}{2-}\right)$ प्रमाण पूर्व कृष्टि जाने पर संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि होती है ।

ऐसे करते हुए लोभ की तृतीय संग्रह की अंतिम कृष्टि तक द्रव्य दिया जाता है ।

लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि

- इसके ऊपर लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि है । उसमें भी बंध द्रव्य का अभाव है । अत: मात्र संक्रमण द्रव्य से ही द्रव्य दिया जाएगा ।

1. इसमें अधस्तन अपूर्व कृष्टियों में द्रव्य दिया जाता है ।
2. फिर पूर्व कृष्टियों में द्रव्य दिया जाता है ।
3. लोभ की द्वितीय संग्रह कृष्टि की संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि के अंतराल प्रमाण पूर्व कृष्टि जाने पर एक संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि में द्रव्य दिया जाता है ।

- इस प्रकार द्वितीय संग्रह की अंतिम कृष्टि तक जानना चाहिए ।
- पाँचों प्रकार के द्रव्य का विभाजन तृतीय संग्रह कृष्टि की तरह है । विशेष यह है कि
  - उभयद्रव्यविशेष द्रव्य (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्व-अपूर्व कृष्टि) प्रमाण दिया जाता है ।
  - द्वितीय संग्रह की प्रथम पूर्व कृष्टि में व्यतीत हुई पूर्व कृष्टि प्रमाण अधस्तन शीर्ष द्रव्य दिया जाता है ।
- शेष सब कथन तृतीय संग्रहवत् है ।

लोभ की प्रथम संग्रह कृष्टि

द्वितीय संग्रह कृष्टि के ऊपर लोभ की प्रथम संग्रह कृष्टि है । इसका बंध भी होता है । इसलिये इसमें बंध द्रव्य भी है और संक्रमण द्रव्य भी है। अत: 5 प्रकार के संक्रमण द्रव्य और 4 प्रकार के बंध द्रव्य का विभाजन कहते हैं ।

संक्रमण द्रव्य द्वारा की गयी अधस्तन कृष्टियों में से जघन्य कृष्टि में 1 अधस्तन कृष्टि द्रव्य, एक मध्यमखंड, (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्व-अपूर्व कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष देता है । यह लोभ की द्वितीय संग्रह की अंतिम कृष्टि में दिये द्रव्य से असंख्यात गुणा द्रव्य है ।

इसके ऊपर द्वितीय कृष्टि से अधस्तन अपूर्व कृष्टियों की अंतिम कृष्टि तक एक-एक चयहीन क्रम से द्रव्य देता है ।

पूर्व कृष्टि द्रव्य का विभाजन

- इसके ऊपर पूर्व कृष्टियों की प्रथम कृष्टि में अतीत पूर्व कृष्टि प्रमाण अधस्तन शीर्षविशेषद्रव्य, एक मध्यमखंड और (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्वापूर्व कृष्टियाँ) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य देता है । यह अंतिम अधस्तन अपूर्व कृष्टि में दिये द्रव्य से असंख्यात गुणाहीन द्रव्य है । कारण पूर्ववत् है ।
- इसके ऊपर संक्रमण अंतर कृष्टि के अंतराल से एक कम कृष्टि तक एक-एक शीर्ष द्रव्य बढ़ते हुए और एक-एक उभयद्रव्यविशेष घटाते हुए देता है ।
- इसके ऊपर संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि में 1 संक्रमण अंतर कृष्टि संबंधी सदृश खंड, पूर्व से एक कम उभयद्रव्यविशेषद्रव्य देता है ।
- इसके ऊपर इसी क्रम से इस संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि से आगे पूर्व कृष्टियों में एक-एक शीर्ष द्रव्य बढ़ाते हुए; एक-एक उभयद्रव्यविशेष घटते हुए पुनः संक्रमण का द्रव्य दिया जाता है । संक्रमण के अंतराल प्रमाण कृष्टियाँ जाने पर पुनः एक संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि होती है । उसमें पूर्ववत् एक सदृश खंड एवं एक चयहीन उभयद्रव्यविशेष द्रव्य दिया जाता है ।
- यह क्रम ऊपर तक चलता जाता है ।

बंध-योग्य कृष्टियों में बंध द्रव्य

इतनी विशेषता है कि बंध-योग्य कृष्टि की जघन्य कृष्टि से बंध-योग्य उत्कृष्ट कृष्टि है, उन कृष्टियों में जो पूर्व कृष्टि एवं संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि है, उनमें एक उभयद्रव्यविशेष का अनंतवां भाग प्रमाण हीन संक्रमण द्रव्य देता है।

इन बंध-योग्य पूर्व कृष्टि एवं संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियों में यह कम किया द्रव्य बंध द्रव्य में से दिया जाता है।

बंध द्रव्य में से पूर्व जघन्य बंधकृष्टि में एक बंध मध्यमखंड, सर्व बंधकृष्टि प्रमाण बंधविशेष द्रव्य देता है।

इसके ऊपर अंतिम बंध कृष्टि तक एक बंध मध्यमखंड एवं एक-एक कम बंधविशेष द्रव्य देता है।

प्रथम अपूर्व बंध-कृष्टि

$$\text{अपूर्व बंध-कृष्टि के पहले संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियाँ} = \frac{\text{बंध कृष्टि का अंतराल}}{\text{संक्रमण कृष्टि का अंतराल} + 1}$$

पूर्वोक्त प्रमाण संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियों के ऊपर संक्रमण का अंतराल पूर्ण होने पर एक अपूर्व बंध-कृष्टि रचता है । इस अपूर्व बंध-कृष्टि में संक्रमण द्रव्य नहीं देता है ।

इस बंधांतर अपूर्व कृष्टि में एक बंधांतर सदृश खंड, उभयद्रव्य विशेष के स्थान पर बंधांतर कृष्टि विशेष द्रव्य में से (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्व-अपूर्व कृष्टि) प्रमाण विशेष द्रव्य देता है । यह द्रव्य एक विशेष के अनंतवें मात्र से हीन है । इसकी पूर्ति एक बंधमध्यमखंड एवं (सर्व बंधकृष्टि – व्यतीत बंधकृष्टि) प्रमाण बंधविशेष द्रव्य देने पर होती है ।

इस बंधांतर अपूर्व में दिया गया बंध द्रव्य; इसके पूर्व की कृष्टि में दिये बंध द्रव्य से अनंतगुणा है क्योंकि इसके पूर्व की कृष्टि में बंध द्रव्य एक विशेष का अनंतवां भाग मात्र है एवं बंधांतर कृष्टि का द्रव्य अनंत गुणा है ।

- इस बंधांतर के पश्चात् पूर्व कृष्टि है । इसमें पहले की भांति संक्रमण द्रव्य एवं बंध द्रव्य दिया जाता है ।
- इस प्रकार पूर्व कृष्टियाँ और बीच-बीच में संक्रमण अपूर्व कृष्टियाँ होती हैं ।
- $\frac{\text{बंधांतर अंतराल}}{\text{संक्रमणांतर अंतराल}+1}$ प्रमाण संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियाँ होने के बाद बंधांतर अपूर्व कृष्टि होती हैं । वहाँ द्रव्य देने का विधान पूर्वोक्त प्रकार से जानना चाहिए ।
- इसी प्रकार बंधांतर की अंतिम कृष्टि तक जानना चाहिए ।
- अंतिम बंधांतर कृष्टि के ऊपर बंध की उत्कृष्ट कृष्टि तक बंध द्रव्य में से एक-एक बंधमध्यमखंड और चयहीन क्रम से बंधविशेष द्रव्य देना चाहिए।
- इस प्रकार लोभ कषाय का समस्त बंध द्रव्य समाप्त हुआ ।
- इसके ऊपर अंतिम कृष्टि तक 4 प्रकार का संक्रमण द्रव्य ही दिया जाता है ।
- यहाँ संक्रमण द्रव्य भी पूरा समाप्त हुआ ।

क्रोध, मान, माया की संग्रह कृष्टियों में द्रव्य

इसके ऊपर माया और मान की 3-3 संग्रह कृष्टियों में इसी प्रकार द्रव्य देने का विधान जानना ।

विशेष इतना है कि मान की प्रथम संग्रह कृष्टि में संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टियों का अंतराल $\frac{\text{ओ}}{15}$ है क्योंकि वहाँ आय द्रव्य 15 है ।

क्रोध की द्वितीय एवं तृतीय संग्रह में भी लोभ के समान जानना चाहिए । परंतु क्रोध की तृतीय संग्रह कृष्टि में संक्रमणांतर का अंतराल $\frac{\text{ओ}}{14}$ तथा द्वितीय संग्रह कृष्टि में संक्रमणांतर का अंतराल $\frac{\text{ओ}}{182}$ है ।

www.JainKosh.org

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में द्रव्य

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि में संक्रमण द्रव्य का अभाव है । इसलिए घात द्रव्य का एकभाग अलग रखा था; उसमें से 3 प्रकार का संक्रमण द्रव्य दिया जाएगा । यहाँ संक्रमणांतर अपूर्व कृष्टि एवं अधस्तन अपूर्व कृष्टि नहीं बनती है । बंधांतर अपूर्व कृष्टि बंधद्रव्य द्वारा बनायी जाती है ।

प्रथम संग्रह कृष्टि की आदि कृष्टि में व्यतीत पूर्व कृष्टि प्रमाण अधस्तन शीर्ष, एक मध्यमखंड और (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्व-अपूर्व कृष्टि) प्रमाण उभयद्रव्यविशेष द्रव्य निक्षेपण करता है ।

यह दिया गया द्रव्य; क्रोध की द्वितीय संग्रह की अंतिम कृष्टि में दिये द्रव्य से चयहीन ही है ।

इसके ऊपर एक-एक अधस्तन शीर्ष बढ़ते क्रम से तथा एक-एक उभयविशेषद्रव्य घटते क्रम से अंत तक देता है ।

www.JainKosh.org

बंध-योग्य कृष्टियों में द्रव्य

इतना विशेष है कि बंध-योग्य कृष्टि की जघन्य से उत्कृष्ट कृष्टि तक एक विशेष का अनंतवां भाग हीन द्रव्य देता है ।

इस हीनद्रव्य की पूर्ति बंध द्रव्य द्वारा करता है । इस हेतु बंध-योग्य कृष्टियों में एक बंधमध्यमखंड और घटते क्रम से बंधविशेष द्रव्य देता है । प्रथम बंध-योग्य कृष्टि में बंधकृष्टि प्रमाण बंधविशेष देता है । इसके ऊपर एक-एक घटता बंधविशेष देता है ।

पूर्व कृष्टि की प्रथम कृष्टि से बंधांतर अपूर्व कृष्टि का अंतराल प्रमाण कृष्टि जाने पर बंधांतर अपूर्व कृष्टि करता है ।

इस बंधांतर कृष्टि में एक बंधांतर सदृश खंड, बंधांतर कृष्टि विशेष में से (सर्व कृष्टि – व्यतीत पूर्व-अपूर्व कृष्टि) प्रमाण चय में से अनंतवां भाग हीन प्रमाण द्रव्य देता है तथा बंध का एक मध्यमखंड तथा (सर्व बंध कृष्टि – अतीत बंध कृष्टि) प्रमाण बंधविशेष द्रव्य देता है ।

यह दिया गया बंधांतर द्रव्य; पूर्व कृष्टि में दिये गए बंध द्रव्य से अनंतगुणा है ।

उसके ऊपर पूर्व कृष्टि में अधस्तन शीर्षविशेष, एक मध्यमखंड, उभयद्रव्य विशेष द्रव्य; एक विशेष के अनंतवें भाग से हीन करके निक्षेपण करता है । हीन किये द्रव्य को बंधद्रव्य में से देता है ।

यह बंधद्रव्य; इसके पूर्व की बंधांतर कृष्टि के द्रव्य से अनंतगुणाहीन है ।

इसके ऊपर पुनः बंधांतर का अंतराल जाने पर बंधांतर अपूर्व कृष्टि होती है ।

वहाँ द्रव्य देने का विधान पूर्ववत् जानना ।

इस प्रकार बंध की उत्कृष्ट कृष्टि तक जानना ।

उसके ऊपर घात द्रव्य से ही अपनी अंतिम कृष्टि तक निक्षेपण करना ।

इस प्रकार दीयमान द्रव्य का क्रम कहा ।

अनंत ऊष्ट्रकूट

जिस प्रकार ऊँट की पीठ पहले ऊँची और बाद में नीची, उसके बाद कहीं ऊँची, कहीं नीची होती है, उसी प्रकार कहीं अधिक, कहीं कम, कहीं कुछ हीन, कुछ अधिक द्रव्य देने से अनंत स्थानों पर ऊष्ट्रकूट रचना होती है क्योंकि ऐसा देने पर ही एक गोपुच्छ रचना होती है ।

दृश्यमान द्रव्य लोभ की तृतीय संग्रह की प्रथम कृष्टि से क्रोध की प्रथम संग्रह की अंतिम कृष्टि तक एक चयहीन क्रम से अवस्थित है ।

यह प्रथम समय के दीयमान द्रव्य की प्ररूपणा; द्वितीयादि समयों में भी इसी प्रकार करनी चाहिए ।

कोहादिकिट्टिवेदगपढमे तस्स य असंखभागं तु ।
णासेदि हु पडिसमयं, तस्सासंखेज्जभागकमं ॥537॥

- अन्वयार्थः (कोहादिकिट्टिवेदगपढमे) क्रोध की प्रथम संग्रह-कृष्टि के वेदक के प्रथम समय में (तस्स य असंखभागं तु) सर्वकृष्टियों के असंख्यातवें भागमात्र कृष्टियों का (णासेदि) घात करता है।
- (पडिसमयं) प्रत्येक समय में (तस्सासंखेज्जभागकमं) उसके असंख्यातवें भागप्रमाण कृष्टियों का क्रम से घात करता है ॥537॥

कृष्टि नाश

कृष्टि वेदक के विशुद्धि के माहात्म्य से प्रत्येक समय में चारों कषायों की अग्र कृष्टियों का घात होता है ।

प्रथम समय में सर्व कृष्टियों के असंख्यातवें भाग का घात होता है । द्वितीयादि समयों से द्विचरम समय तक असंख्यातगुणाहीन कृष्टियों का घात होता है ।

यद्यपि विशुद्धि अनंत गुणा बढ़ रही है, तदपि घाते जाने वाली कृष्टियों की संख्या घट रही है क्योंकि अधिक शक्ति वाली कृष्टियों के घात के लिए अधिक शक्ति चाहिए ।

चरम समय में वेदन की जाने वाली कृष्टि के नवकबंध और उच्छिष्टावली प्रमाण कृष्टियों को छोड़कर सर्व कृष्टियों का अभाव होता है । जिन अन्य कषायों का वेदन नहीं चल रहा, उनके असंख्यातवें भाग प्रमाण ही कृष्टियों का घात होता है ।

अग्र कृष्टियों का घात

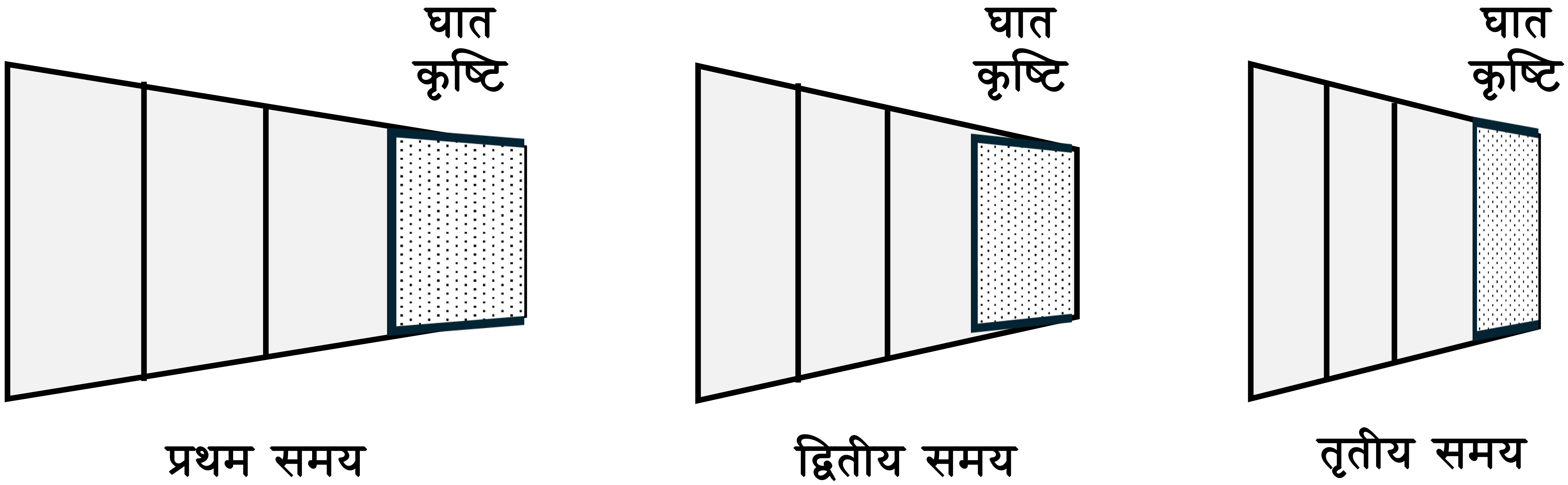

इसी प्रकार प्रत्येक संग्रह में प्रतिसमय घात जानना ।

कोहस्स य जे पढमे, संगहकिट्टिम्हि णट्ठकिट्टीओ ।
बंधुज्झियकिट्टीणं, तस्स असंखेज्जभागो हु ॥538॥

- अन्वयार्थ: (कोहस्स) क्रोध की (पढमे संगहकिट्टिम्हि) प्रथम संग्रह-कृष्टि के वेदककाल में (जे णट्ठकिट्टिओ) जो कृष्टियाँ नष्ट हुई वे कृष्टियाँ (तस्स बंधुज्झियकिट्टीणं) बंधरहित कृष्टियों के (असंखेज्जभागो हु) असंख्यातवें भागप्रमाण हैं ॥538॥

www.JainKosh.org

कितनी कृष्टियों का नाश?

प्रथम समयवरष्टिकृष्टि वेदक के क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि संबंधी नीचे और ऊपर की असंख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियाँ बंधरहित हैं ।

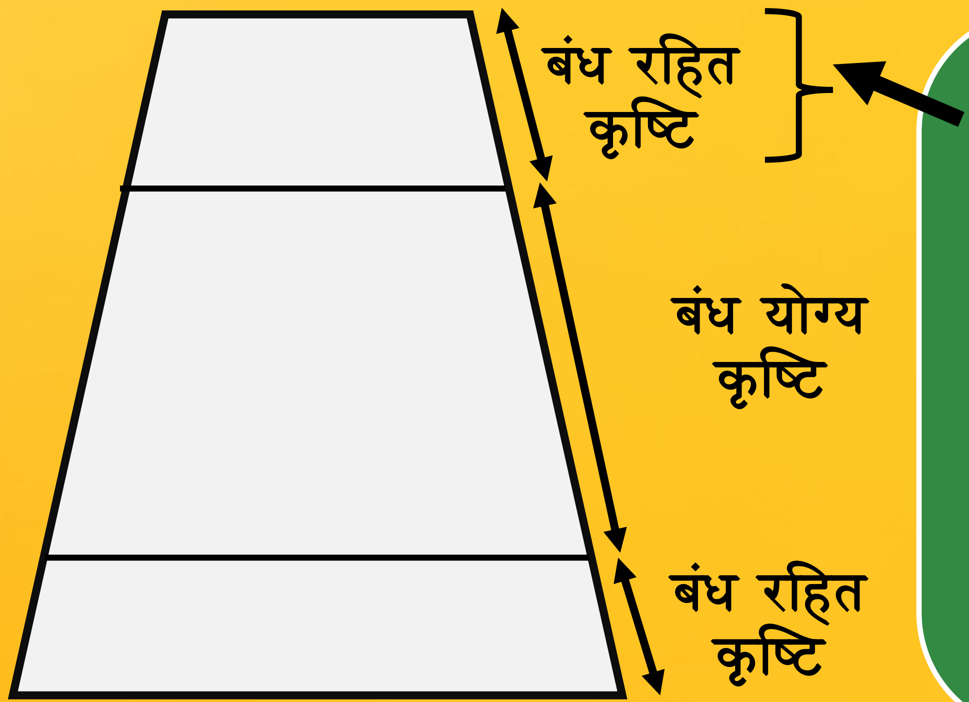

उनमें से उपरिम अबध्यमान कृष्टियों के असंख्यातवें भाग प्रमाण कृष्टियाँ इस क्रोधवेदक के प्रथम से द्विचरम समय में नष्ट होती हैं । शेष बहुभाग प्रमाण कृष्टियाँ अंतिम समय में घाती जाती हैं ।

कोहादि किट्टियादिट्ठिदिम्हि समयाहियावलीसेसे ।
ताहे जहण्णुदीरइ, चरिमो पुण वेदगो तस्स ॥539॥

- अन्वयार्थ: (कोहादि किट्टियादिट्ठिदिम्हि) क्रोध की प्रथम संग्रह-कृष्टि की प्रथम स्थिति में (समयाहियावलीसेसे) समय अधिक आवलि अवशेष रहने पर (जहण्णुदीरइ) स्थिति की जघन्य उदीरणा होती है।
- (ताहे तस्स पुण) वहीं उस प्रथम संग्रह-कृष्टि का वह (चरिमो वेदगो) चरम वेदक होता है ॥539॥

प्रथम संग्रह कृष्टि वेदक का अंतिम समय

<u>जघन्य उदीरणा</u>

क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि वेदक की प्रथम स्थिति में (1 आवली+1) समय शेष रहने पर क्रोध प्रथमसंग्रह का अंतिम समयवर्ती वेदक होता है ।

इस ही समय क्रोध प्रथम संग्रह की जघन्य स्थिति उदीरणा होती है । क्योंकि प्रथम स्थिति से ही उदीरणा हो रही है ।

प्रथम स्थिति में शेष एक आवली उच्छिष्टावली स्वरूप है । उसका उदय स्व-स्वरूप से ना आकर पररूप से संक्रमित होकर आता है ।

ताहे संजलणाणं, बंधो अंतोमुहुत्तपरिहीणो ।
सत्तो वि य सददिवसा, अडमासब्भहिय छव्वरिसा ॥540॥

- अन्वयार्थः (ताहे) वहाँ अर्थात् प्रथम संग्रह-कृष्टि वेदक के अंतिम समय में (संजलणाणं) चार संज्वलन कषायों का (बंधो) स्थिति-बंध (अंतोमुहुत्तपरिहीणो) अंतर्मुहूर्त हीन (सद दिवसा) सौ दिवस (य) और (सत्तो वि) सत्त्व भी अंतर्मुहूर्त से हीन (अडमासब्भहिय छव्वरिसा) आठ मास अधिक छह वर्ष होता है ॥540॥

अंतिम समयवर्ती वेदक के संज्वलन का स्थिति-बंध

क्रोध संबंधी 3 संग्रह कृष्टियों के वेदककाल में दो मास (60 दिवस) स्थिति-बंध घटता है ।

क्योंकि क्रोध कृष्टिवेदक काल के प्रारंभ में संज्वलन-4 का स्थिति-बंध 4 मास है । माया की प्रथम संग्रहकृष्टि के वेदनकाल के प्रारंभ में संज्वलन-4 का स्थिति-बंध 2 मास है । अर्थात् क्रोध की तीन संग्रह के वेदन काल में 2 मास स्थिति-बंध घटा ।

तीन संग्रह वेदक काल में 2 मास घटे, तो एक संग्रह वेदक काल में कितना घटा ?

$$\frac{60 \text{ दिन}}{3} \times 1 = 20 \text{ दिन}$$

अतः क्रोध प्रथम संग्रह वेदक के अंत में (100 दिन – अंतर्मुहूर्त) प्रमाण स्थिति-बंध होता है ।

अंतिम समयवर्ती वेदक के संज्वलन का स्थिति-सत्त्व

क्रोध कृष्टि वेदक के प्रारंभ में संज्वलन का स्थिति-सत्त्व 8 वर्ष है । मान कृष्टि वेदक के प्रारंभ में संज्वलन का स्थिति-सत्त्व 4 वर्ष है । याने 3 संग्रह वेदक काल में 4 वर्ष स्थिति-सत्त्व घटा ।

तो 1 संग्रह वेदक काल में कितना स्थिति-सत्त्व घटा ?

$\frac{4 \text{ वर्ष}}{3} \times 1 = 1$ वर्ष 4 मास

अत: क्रोध प्रथम संग्रह वेदक के अंतिम समय में 8 वर्ष – 1 वर्ष, 4 मास = 6 वर्ष 8 मास प्रमाण स्थिति-सत्त्व रहता है ।

घादितियाणं बंधो, दसवासंतो मुहुत्तपरिहीणा ।
सत्तं संखं वस्सा, सेसाणं संखऽसंखवस्साणि ॥541॥

- अन्वयार्थः (घादितियाणं बंधो) तीन घातिकर्मों का स्थिति-बंध (दसवासंतो मुहुत्तपरिहीणा) अंतर्मुहूर्त हीन दस वर्ष होता है और (सत्तं संखं वस्सा) स्थिति-सत्त्व संख्यात वर्ष रहता है।
- (सेसाणं) शेष तीन अघाति कर्मों का (संखऽसंखवस्साणि) स्थिति-बंध संख्यात वर्ष और स्थिति-सत्त्व असंख्यात वर्ष रहता है ॥541॥

शेष कर्मों का स्थिति-बंध, सत्त्व

क्रोधवेदक के प्रथम समय में 3 घाति कर्मों का स्थिति-बंध संख्यात हजार वर्ष प्रमाण था । वह संख्यात गुणी हानि द्वारा (10 वर्ष – अंतर्मुहूर्त) प्रमाण रह गया है ।

इस प्रकार क्रोध की प्रथम संग्रह कृष्टि का वेदक काल समाप्त होता है ।

कर्म	स्थिति-बंध	स्थिति-सत्त्व
संज्वलन	100 दिन – अंतर्मुहूर्त	6 वर्ष 8 मास
3 घाति	10 वर्ष – अंतर्मुहूर्त	संख्यात वर्ष
3 अघाति	संख्यात हजार वर्ष	असंख्यात वर्ष

- Reference : श्री लब्धिसार टीकासहित अनुवाद – ब्र. सुजाता रोटे, बाहुबली (वर्तमान में आर्यिका श्री शुद्धोहंश्री माताजी)
- For updates / feedback / suggestions, please contact
  - Sarika Jain, sarikam.j@gmail.com
  - www.jainkosh.org
  - ☎: 94066-82889

• इसी विषय के विडियो लेक्चर हमारे चैनल पर उपलब्ध हैं । आप अवश्य लाभ लें । www.Jainkosh.org/wiki/Videos पेज पर जाएँ एवं लब्धिसार की प्लेलिस्ट चुनें ।